॥ ॐ ॥

श्री विष्णुसहस्रनाम स्तोत्रम्

(हिन्दी भाषा-टीका सहितम्)

[श्री विष्णु सहस्रनाम शाप-विमोचन विधि, विष्णु सहस्रनाम माहात्म्य, विष्णुसहस्रनाम पाठ विधानम्, श्रीनारायण कवच, माध्यन्दिनीय पुरुषसूक्तम्, श्रीसूक्तम्, कनकधारा स्तव, लक्ष्मीस्तोत्र, लक्ष्मीजी की आरती एवं तुलसीजी की आरती सहित]

संपादक एवं टीकाकार :

विद्या-वारिधि पं० राजेश दीक्षित

प्रकाशक :

कमल पुस्तकालय (रजि०)

१६७७, नई सड़क, दिल्ली-११०००६

[संस्करण 1996 ई०]

[मूल्य 15 रुपया]

दो शब्द

- श्रीविष्णु सहस्रनाम का पाठ समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाला माना जाता है। नित्य पाठ से अभीष्ट-सिद्धि प्राप्त होती है।
- अगस्ति संहिता के अनुसार श्रीविष्णु सहस्रनाम रुद्रशापग्रस्त है अतः इसका पाठ आरम्भ करने से पूर्व शाप-विमोचन विधि का प्रयोग अवश्य करना चाहिए, अन्यथा पाठ निष्फल सिद्ध होता है। इसी कारण प्रस्तुत संकलन में सर्वप्रथम 'शाप विमोचन विधि' का उल्लेख किया गया है।
- शाप विमोचन विधि के पश्चात् 'विष्णु सहस्रनाम पाठ-विधानम्' तथा माहात्म्य, न्यास आदि का उल्लेख करने के उपरान्त ही 'विष्णु सहस्रनाम स्तोत्र' को हिन्दी-टीका सहित प्रस्तुत किया गया है। अन्त में कवच, सूक्त, आरती आदि दिए गए हैं।
- इस प्रकार इस संकलन का सम्पादन वैज्ञानिक तथा क्रमिक विधि से किया गया है। आशा है इससे पाठकगण लाभ उठायेंगे।

—राजेश दीक्षित

अथ विष्णुसहस्रनाम शाप-विमोचनम्

'अगस्ति संहिता' के अनुसार विष्णु सहस्रनाम का पाठ आरम्भ करने से पूर्व 'शाप-विमोचन विधि' का प्रयोग करना आवश्यक है, तभी पाठ का पूर्ण फल प्राप्त होता है। इस हेतु कुशासन पर पूर्वाभिमुख बैठकर आचमन एवं प्राणायाम करने के पश्चात् दांये हाथ में जल लेकर निम्नलिखित विनियोग-वाक्य, पढ़कर भूमि पर जल छोड़ देना चाहिए—

अथ विनियोगः

"ॐ अस्य श्रीविष्णोर्दिव्यसहस्रनाम शाप-विमोचन मन्त्रस्य महादेव ऋषिः अनुष्टप् छन्दः श्रीरुद्रानुग्रह शक्तिर्देवता सुरेशः शरणं शर्मेति बीजम् अनन्तो हुतभुग् भोक्तेति शक्तिः सुरेश्वरायेति कीलकं रुद्रशापविमोचने विनियोगः।"

इसके उपरान्त निम्नानुसार 'ऋष्यादिन्यास' करे—

अथ ऋष्यादिन्यासः

श्रीमहादेवर्षये नमः, शिरसि । अनुष्टुपच्छन्दसे नमः, मुखे । श्री रुद्रानुग्रह शक्ति देवतायै नमः, हृदये । सुरेशः शरणं शर्म्मेति बीजाय नमः, गुह्ये । अनन्तो हुतभुग् भोक्तेते शक्तये नमः, पादयोः । सुरेश्वरायेति कीलकाय नमः, सर्वांगे ।

उक्त न्यास करते समय सर्वप्रथम 'श्रीमहादेवर्षयेनमः शिरसि' कहकर अपने दाहिने हाथ की पाँचों अंगुलियों द्वारा मस्तक (सिर) का स्पर्श करना चाहिए । फिर 'अनुष्टुपच्छन्दसे नमः मुखे' कहकर मुख का स्पर्श करना चाहिए । फिर 'श्रीरुद्रानुग्रह शक्ति देवतायै नमः हृदयें' कहकर हृदय स्थल का स्पर्श करना चाहिए । फिर 'सुरेशः शरणं शर्म्मेति बीजाय नमः गुह्ये' कहकर गुप्तांग का स्पर्श करके जल से हाथ को धो लेना चाहिए । फिर 'अनन्तो हुतभुग्भोक्तेति शक्तये नमः पादयो' कह कर दोनों पाँवों का स्पर्श करना चाहिए । अन्त में 'सुरेश्वरायेति कीलकाय नमः सर्वाङ्गे' कह कर दोनों हाथों को अपने आगे मस्तक से पाँव तक, ऊपर से नीचे की ओर लाना चाहिए ।

उक्त ऋष्यादि न्यास के पश्चात् निम्नानुसार 'करन्यास' करना चाहिए—

अथ करन्यासः

ॐ क्लीं ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ हूं मध्यमाभ्यां नमः । ॐ हैं अनामिकाभ्यां नमः ।
ॐ हौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ हः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ।

उक्त मन्त्रों का उच्चारण करते हुए क्रमशः अंगूठा, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका, कनिष्ठिका एवं करतल तथा करपृष्ठ द्वारा न्यास करें ।

इसके बाद निम्नानुसार 'अङ्गन्यास' करना चाहिए—

अथ अङ्गन्यासः

ॐ क्लीं हृदयाय नमः । ॐ हीं शिरसे स्वाहा ।
ॐ हूं शिखायैवषट् । ॐ हैं कवचाय हुम् ।
ॐ हौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ हः अस्त्राय फट् ।

उक्त न्यासों को करने के बाद निम्नानुसार ध्यान करें—

अथ ध्यानम्

तमाल श्यामल तनुं पीत कौशेय वाससम् ।
स्वर्णमूर्तिमयं देवं ध्यायेन्नारायणं विभुम् ॥

भावार्थ—'मैं तमाल वृक्ष के समान श्यामवर्ण वाले एवं पीत-कौशेय वस्त्र धारण करने वाले स्वर्ण-मूर्तिमय देव विभु श्रीनारायण का ध्यान करता हूं ।

उक्त 'ध्यान' के पश्चात् निम्नलिखित मन्त्र का सौ बार अथवा केवल दस बार जप करने के बाद थोड़ा सा जल पृथ्वी पर छिड़क दें।

अथ मन्त्रः

"ॐ क्लीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ह्रं सं सुरेश्वराय स्वाहा।"

इसके पश्चात् निम्नलिखित वाक्य का उच्चारण करें—

"ॐ अस्य श्रीविष्णोः सहस्रनामस्तवं रुद्रशाप विमुक्तोभव।"

इसके बाद विष्णु सहस्रनाम का पाठ आरम्भ करना चाहिए।

कहा गया है—

"श्रीविष्णोः सहस्रनाम यो न कृच्छापमोचनः।
पठेच्छुभानि सर्वाणि तस्य स्युर्निष्फलानि तु॥"

अर्थात् जो व्यक्ति उक्त विधि से 'रुद्रशाप-विमोचन' किये बिना श्रीविष्णुसहस्रनाम का पाठ करता है, वह निष्फल होता है (रुद्रशाप-विमोचन के बाद आरम्भ किया गया विष्णु सहस्रनाम का पाठ ही सवार्थ सिद्धिदायक होता है।)

॥ इत्यगस्ति संहितायां विष्णोः सहस्रनाम्नां रुद्रशापविमोचन विधिः समाप्तः॥

———

श्रीविष्णुसहस्रनाम माहात्म्यम्

।। अथ ध्यानम ।।

पीताम्बरधरं विष्णुं कृष्णवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ।।१।।
नारायणं नमस्कृत्यं नरं चैव नरोत्तमम् ।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत् ।।२।।
व्यासं वशिष्ठनप्तारं शक्तेः पौत्रमकल्मषम् ।
पाराशरात्मजं वन्दे शुकतातं तपोनिधिम् ।।३।।
व्यासाय विष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे ।
नमो वै ब्रह्मनिधये वशिष्ठाय नमोनमः ।।४।।

अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः ।
अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणिः ॥५॥

ध्यान इस प्रकार करें—

पीताम्बरधारी, कृष्णवर्ण, चार भुजाओं वाले, प्रसन्नमुख श्रीविष्णु का मैं समस्त विघ्नों की शान्ति हेतु ध्यान करता हूँ ॥१॥

'नारायण' तथा नरों में श्रेष्ठ 'नर' तथा देवी सरस्वती का मैं ध्यान करता हूँ । ये मुझे विजय प्रदान करें ॥२॥

महर्षि वशिष्ठ के प्रपौत्र, शक्ति के पौत्र, पाराशर के पुत्र तथा शुकदेव के पिता परमतपस्वी व्यासजी की मैं वन्दना करता हूँ ॥३॥

श्रीविष्णु स्वरूप व्यास एवं व्यास स्वरूप श्रीविष्णु तथा ब्रह्माजी एवं वशिष्ठ मुनि को मैं नमस्कार करता हूँ ॥४॥

भगवान् बादरायण अर्थात् व्यासजी चार-मुखों से रहित होने पर भी दूसरे ब्रह्म हैं, दो भुजाओं वाले होने पर भी दूसरे विष्णु हैं तथा मस्तक पर तीसरा नेत्र न होने पर भी दूसरे शिव हैं ॥५॥

❀ अथ माहात्म्यम् ❀

यस्य स्मरणमात्रेण जन्म संसार बन्धनात् ।
विमुच्यते नमस्तस्यै विष्णवे प्रभविष्णवे ॥१॥

जिनके स्मरण मात्र से ही प्राणी जन्म तथा संसार के बन्धनों से छूट जाता है उन प्रभविष्णु को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१॥

नमः समस्त भूतानामादिभूताय भूभृते ।
अनेक रूपरूपाय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥२॥

समस्त प्राणियों के आदिभूत, पृथ्वी को धारण करने वाले तथा अनेक रूपों वाले प्रभविष्णु को मैं नमस्कार करता हूं ॥२॥

॥ वैशम्पायन उवाच ॥

श्रुत्वा धर्माण्यशेषेण पावनानि च सर्वशः ।
युधिष्ठिरः शान्तनवं पुनरे वाभ्यभाषतः ॥३॥

वैशम्पायन नें कहा—"सम्पूर्ण पवित्र धर्मों को सुननें के बाद युधिष्ठिर ने भीष्मपितामह सें पुनः इस प्रकार कहा—॥३॥

॥ युधिष्ठिर उवाच ॥

किमेकं दैवतं लोके किं वाऽप्येकं परायणम् ।
स्तुवन्तः कं कमर्चन्तः प्राप्नुयुर्मानवाः शुभम् ॥४॥

युधिष्ठिर बोले—"इस संसार में एक ही देवता कौनसा है ? किस एक की आराधना करनी चाहिए ? किसकी स्तुति तथा अर्चना करने से मनुष्य को कल्याण की प्राप्ति होती है ? ।।४।।

को धर्मः सर्वधर्माणां भवतः परमो मतः ।
किं जपन् मुच्यते जन्तुर्जन्म संसारबन्धनात् ।।५।।

आप सब धर्मों में किस धर्म को श्रेष्ठ समझते हैं ? किसका जप करने से मनुष्य जन्म तथा संसार-रूपी बंधन से मुक्त हो जाता है ? ।।५।।

।। भीष्म उवाच ।।

जगत्प्रभुं देवदेवमनन्तं पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन्नामसहस्रेण पुरुषः सततोत्थितः ।।६।।

भीष्म ने कहा—"जगत्प्रभु, देवाधिदेव, अनन्त, पुरुषोत्तम के सहस्रनाम का जप करने से मनुष्य निरन्तर उन्नति प्राप्त करता है" ।।६।।

तमेव चार्चयन्नित्यं भक्त्या पुरुषमव्ययम् ।
ध्यायन् स्तुवन् नमस्यंश्च यजमानस्तमेव च ।।७।।

यजमान को उसी अविनाशी पुरुष की नित्य अर्चना, ध्यान, स्तुति एवं नमस्कार करना चाहिए ।।७।।

अनादिनिधनं विष्णुं सर्वलोक महेश्वरम् ।
लोकाध्यक्षं स्तुवन्नित्यं सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥८॥

अनादि निधन श्रीविष्णु सब लोकों के सर्वोच्च स्वामी एवं लोकाध्यक्ष हैं। उनका नित्य स्मरण करने से सब दुःखों से मुक्ति मिल जाती है ॥८॥

ब्रह्मण्यं सर्वधर्मज्ञं लोकानां कीर्तिवर्धनम् ।
लोकनाथं महद्भूतं सर्वभूतभवोद्भवम् ॥९॥

श्रीविष्णु ब्रह्मण्य, सर्वधर्मज्ञ, लोकों की कीर्ति बढ़ाने वाले, लोकनाथ, महाभूत तथा समस्त प्राणियों के उद्भव स्थल हैं ॥९॥

एष मे सर्वधर्माणां धर्मोऽधिकतमो मतः ।
यद्भक्त्या पुण्डरीकाक्षं स्तवैरर्चेन्नरः सदा ॥१०॥

मेरे मत में सब धर्मों में उत्तम धर्म यही है कि मनुष्य सदैव भक्तिपूर्वक पुण्डरीकाक्ष नारायण की ही अर्चना करे ॥१०॥

परमं यो महत्तेजः परमं यो महत्तपः ।
परमं यो महद् ब्रह्म परमं यः परायणम् ॥११॥

वे तेजस्वी ही महातेज हैं, वे तपस्वी ही महातप हैं, वे ही महद्ब्रह्म हैं और वे ही परम होने के कारण परायण करने के योग्य हैं ॥११॥

पवित्राणां पवित्रं यो मंगलानां च मंगलम् ।
दैवतं देवतानां च भूतानां योऽव्ययः पिता ॥१२॥

वे पवित्रों से भी अधिक पवित्र, मंगलों के भी मंगल, देवताओं के देवता तथा समस्त प्राणियों के अविनाशी पिता हैं ॥१२॥

यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादि युगागमे ।
यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये ॥१३॥

युगारम्भ में समस्त प्राणी उन्हीं से उत्पन्न होते हैं तथा युग-क्षय के समय प्रलय के रूप सब उन्हीं में पुनः समा जाते हैं ॥१३॥

तस्य लोकप्रधानस्य जगन्नाथस्य भूपतेः ।
विष्णोर्नामसहस्रं मे शृणु पापभयापहम् ॥१४॥

उन लोक के प्रधान, जगन्नाथ, पृथ्वी के स्वामी तथा पापरूपी भय को दूर करने वाले श्रीविष्णु के सहस्र नाम को तुम मुझसे सुनो ॥१४॥

यानि नामानि गौणानि विख्यातानि महात्मनः ।
ऋषिभिः परिगीतानि तानि वक्ष्यामि भूतये ॥१५॥

जिनके नामों का गौणरूप से महात्माओं ने वर्णन किया है तथा ऋषियों नें गान किया है, उन्हें मैं लोक कल्याण हेतु बताता हूँ ॥१५॥

विष्णोर्नाम सहस्रस्य वेदव्यासो महानृषिः ।
छन्दोऽनुष्टुप् तथा देवो भगवान् देवकीसुतः ॥१६॥

इस विष्णु सहस्रनाम के महर्षि वेदव्यास हैं, अनुष्टुप छन्द है तथा भगवान् देवकीपुत्र इसके देवता हैं ॥१६॥

अमृतांशूद्भवो बीजं शक्तिर्देवकिनन्दनः ।
त्रिसामा हृदयं तस्य शान्त्यर्थं विनियुज्यते ॥१७॥

इसका अमृतांशु उद्भव बीज है । देवकीनन्दन शक्ति हैं तथा तीनों तापों की शान्ति हेतु हृदय में इसका विनियोग किया जाता है ॥१७॥

विष्णुं जिष्णुं महाविष्णुं प्रभविष्णुं महेश्वरम् ।
अनेकरूप दैत्यान्तं नमामि पुरुषोत्तमम् ॥१८॥

विष्णु, जिष्णु, महाविष्णु, प्रभविष्णु, महेश्वर, अनेक रूपधारी तथा दैत्य-नाशक-पुरुषोत्तम को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१८॥

टिप्पणी—इसके पाठोपरान्त निम्नलिखित वाक्य का उच्चारण करते हुए विनियोग करना चाहिए।

अथ विनियोगः

"ॐ अस्य श्रीविष्णोर्दिव्य सहस्रनाम स्तोत्र महामन्त्रस्य श्रीभगवान् वेदव्यास ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीकृष्णः परमात्मा, श्रीमन्नारायणो देवता, अमृतांशूद्भवो भानुरिति बीजम्, देवकीनन्दनः, स्रष्टेति शक्तिः, त्रिसामा सामगः सामेति हृदयम्, शङ्खभृन्नन्दकी चक्रीति कीलकम्, शार्ङ्गधन्वा गदाधर इत्यस्त्रम्, रथाङ्गपाणिरक्षोभ्य इतिकवचम्, उद्भवः क्षोभणो देव इति परमो मन्त्रः, श्रीकृष्णप्रीत्यर्थं विष्णु सहस्रनाम स्तोत्रजपे (पाठे च) विनियोगः।"

इति विनियोगः

उक्त वाक्य का उच्चारण करते हुए विनियोग करने के बाद आगे लिखे अनुसार क्रमशः 'करन्यास', हृदयादि षडङ्गन्यास, दिग्बन्ध तथा ध्यान करना चाहिए।

अथ करन्यासः

ॐ उद्भवायनमः, अंगुष्ठाभ्यां नमः ।

ॐ क्षोभणायनमः, तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ देवाय नमः, मध्यमाभ्यां नमः ।

ॐ उद्भवाय नमः, अनामिकाभ्यां नमः ।

ॐ क्षोभणाय नमः, कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।

ॐ देवाय नमः, करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः ।

इति करन्यासः ।

करन्यास के पश्चात् निम्नानुसार 'हृदयादि षडङ्गन्यास' करना चाहिए—

अथ हृदयादि षडङ्गन्यासः

ॐ सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः ज्ञानाय, हृदयाय नमः ।

ॐ सहस्रमूर्द्धाविश्वात्मा ऐश्वर्याय, शिरसे स्वाहा ।

ॐ सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः शक्त्यै, शिखायै वषट् ।

ॐ त्रिसामा सामगः सामबलाय, कवचाय हुम् ।
ॐ रथाङ्ग पाणि रक्षोभ्यस्तेजसे, नेत्राभ्यां वौषट् ।
ॐ शार्ङ्ग धन्वा गदाधरः वीर्याय, अस्त्राय फट् ।

इति हृदयादिन्यासः ।

इसके उपरान्त निम्नलिखित वाक्य का उच्चारण करते हुए दिग्बन्ध करें—

अथ दिग्बन्धः

"ॐ ऋतुः सुदर्शनः कालः भूर्भुवः स्वरोम् ।"

इति दिग्बन्धः ।

उक्तविधि से दिग्बन्ध के पश्चात् निम्नानुसार ध्यान करना चाहिए ।

❀ अथ ध्यानम् ❀

ॐ क्षीरोदन्वत्प्रदेशे शुचि मणिविलसत सैकतेर्मौक्तिकानां
मालाक्लृप्तासनस्थः स्फटिक मणिनिभैर्मौक्तिकैर्मण्डितांगः ।
शुभ्रै रभ्रै रदभ्रै रुपरिविरचितैर्मुक्तपीयूष वर्षै
रानन्दी नः पुनीयादरिनलिनगदा शंखपाणिर्मुकुन्दः ॥१॥

भूपादौयस्य नाभिर्वियदसुरनिल श्चन्द्रसूर्यौ च नेत्रे
कर्णावाशाः शिरोद्यौर्मुखिमपिदहनो यस्यवासोऽयमब्धिः ।
अन्तःस्थं यस्य विश्वं सुरनरखगगो भोगि गन्धर्व दैत्यै-
श्चित्रं रं रम्यते तं त्रिभुवन वपुषं विष्णुमीशं नमामि ॥२॥

शान्ताकारं भुजग शयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगन सदृशं मेघवर्णं शुभांगम् ।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरंसर्वलोकैकनाथम् ॥३॥
मेघश्यामं पीत कौशेयवासं श्रीवत्साङ्क कौस्तुभोद्भासिताङ्गम् ।
पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे सर्वलोकैक नाथम् ॥४॥
सशंङ्खचक्रं सकिरीट कुण्डलं सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणाम् ।
सहारवक्षस्थल कौस्तुभश्रियं नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम् ॥५॥

स्वच्छ मणियों की उत्तम बालुका से सुशोभित दुग्ध-समुद्र में मुक्ता-निर्मित आसन पर विराजमान स्फटिकमणि तुल्य स्वच्छ मोतियों से सुशोभित श्रीअङ्ग वाले शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी श्री विष्णु स्वच्छ बादलों द्वारा की गई अमृत-वर्षा की भाँति हमारे ऊपर अपनी कृपा-दृष्टि की वर्षा करें ।।१।।

जिनके चरण 'पृथ्वी' है, नाभि 'आकाश' है, प्राण 'वायु' है, नेत्र 'सूर्य-चन्द्र' हैं, दिशाएँ 'कान' हैं, शिर 'दिक्लोक' है, मुख 'अग्नि' है तथा निवास स्थान 'समुद्र' है; जिनके अन्तःकरण में सम्पूर्ण विश्व निवास करता है; देवता, मनुष्य, पक्षी, पशु, सरीसृप, गन्धर्व एवं दैत्य आदि सभी में जो विचित्र रूप से रमण करते हैं, ऐसे त्रिभुवन रूपी शरीर वाले विराट् श्रीविष्णु को मैं नमस्कार करता हूँ ।।२।।

शान्त प्रकृति वाले, शेषशय्या पर शयन करने वाले, जिनकी नाभि से कमल उत्पन्न हुआ है, जो देवताओं के स्वामी, विश्व के आधार, आकाशतुल्य, मेघ वर्ण, सुन्दर अंगों वाले, लक्ष्मी के पति, कमल जैसे नेत्रों वाले, योगियों द्वारा ध्यानगम्य, भव-भयनाशक तथा सम्पूर्ण लोकों के एकमात्र स्वामी श्री विष्णु की मैं वन्दना करता हूँ ।।३।।

बादलों के समान श्यामवर्ण, पीत कौशेय वस्त्र धारण करने वाले, श्रीवत्स चिह्न को धारण करने वाले, कौस्तुभ मणि की कान्ति से सुशोभित अंगों वाले, पुण्यवान्, कमल के समान विशाल नेत्रों वाले तथा सब लोकों के एकमात्र स्वामी श्रीविष्णु की मैं वन्दना करता हूँ ।।४।।

शंख, चक्र, किरीट, कुण्डल एवं पीतवस्त्रधारी, कमल-नयन, वक्षःस्थल पर कौस्तुभ मणि की माला धारण किये हुए, चतुर्भुज श्रीविष्णु को मैं शिर से नमस्कार करता हूँ ।।५।।

अथ श्रीविष्णु सहस्रनाम पाठ-विधानम्

ब्रह्मलोके समासीन सुराऽसुर गुरु प्रभुम् ।
अगस्त्यश्च पुलस्त्यश्च दुर्वासारण्यकादयः ॥१॥

एक समय ब्रह्मलोक में विराजमान वृहस्पति, शुक्र, अगस्त्य, पुलस्त्य, दुर्वासा अरण्यक ॥१॥

एवमादि मुनीन्द्राणां वृन्दमध्ये पितामहम् ।
पप्रच्छ तं मुनिश्रेष्ठो ह्यगस्त्यश्च महात्मवान् ॥२॥

आदि श्रेष्ठ मुनियों के समूह में मुनिवर्य अगस्त्य ने पितामह से पूछा—॥२॥

❀ अगस्त्य उवाच ❀

केनोपायेन देवेश महद्वैश्वर्य सम्पदः ।
शास्त्रज्ञानं कवित्वं च शत्रुनिग्रहणं तथा ॥३॥

हे देवेश ! किस उपाय द्वारा महान् ऐश्वर्य, सम्पत्ति, शास्त्रज्ञान, कवित्व, शत्रु-निग्रहण ॥३॥

वश्याकर्षण विद्वेष स्तम्भनोच्चाटनादिकम् ।
मारणं परसैन्यस्य स्वसैन्यस्य च रक्षणम् ॥४॥
एतत्सर्वं सुनिश्चित्य वद मे सुरपूजितः ॥५॥

वशीकरण, आकर्षण, विद्वेषण, स्तम्भन, उच्चाटन, शत्रु-सैन्य का मारण एवं स्व-सैन्य का संरक्षण ये सब क्रियाएँ सम्पन्न हो सकती हैं ? हे देवपूज्य ! आप हमें बताइए ॥४-५॥

❀ ब्रह्मोवाच ❀

साधु पृष्टं त्वया विप्र वक्ष्यामि सकलं तव ।
पार्वत्यै परमंप्रीत्या शम्भुना कथितं पुरा ॥६॥

ब्रह्माजी बोले—'हे विप्र ! तुमने सुन्दर प्रश्न किया है । जिस प्रकार प्राचीनकाल में शिवजी ने स्नेहपूर्वक पार्वतीजी को बताया था वह सब मैं तुम्हें बताता हूँ ॥६॥

कैलास शिखरे रम्ये पार्वत्या सह संस्थितः ।
सर्वलोकोपकारार्थं प्रोवाच वृषभध्वजः ॥७॥

एक बार सुन्दर कैलास शिखर पर पार्वतीजी के साथ बैठे हुए वृषभध्वज शिवजी ने सब लोगों का उपकार करने हेतु इस प्रकार कहा—॥७॥

विष्णोः स्तवो महाभागे स्तवराज विधानतः ।
स्तवराजविधानं तदुपर्युपरि वर्धते ॥८॥

हे महाभागे ! विष्णु का स्तोत्र स्तवराज है। उस स्तवराज के विधान से उत्तरोत्तर वृद्धि प्राप्त होती है ॥८॥

महत्तराणि कार्याणि कुरुते यो नरो यदा ।
तदा तस्य प्रकुर्वन्ति विष्णोर्नाम सहस्रकम् ॥९॥

यदि मनुष्य कोई महत्वपूर्ण कार्य करे तो उसे विष्णु सहस्रनाम का पाठ अवश्य करना चाहिए ॥९॥

एकावृत्यादयः पाठाः सर्वेऽमी सर्वकामदः ।
य इदं श्रृणुयान्नित्यं यश्चाऽपि परिकीर्तयेत् ॥१०॥

इसका एक बार का पाठ भी सब कामनाओं की पूर्ति करता है। जो इसका नित्य श्रवण करता है और जो इसका कीर्तन (जप) करता है ॥१०॥

नाऽशुभं प्राप्नुयात् सोऽपि शुभं च परिविन्दति ।
एकावृत्या त्रिगावृत्या पञ्च सप्त यथाक्रमम् ॥११॥

उसका कभी अशुभ नहीं होता तथा शुभ (कल्याण) की वृद्धि होती है। एक बार, तीन बार, पांच बार तथा सात बार जप करने से क्रमशः ॥११॥

उपसर्गादिकं कर्म क्षयं याति न संशयः ।
वार त्रयं प्रजप्येत स्तवराजमनुत्तमम् ॥१२॥

उपसर्गादि (आधि-व्याधि) कर्म निसन्देह नष्ट हो जाते हैं। इस उत्तम स्तवराज का तीन बार जप करने से पाप नष्ट होते हैं ॥१२॥

सप्तावृत्त्या च पाठानां फलमेतच्छुभं तथा ।
वारं चाऽष्टादशं जप्याच्छ्रियमाप्नोति मानवः ॥१३॥

सात बार पाठ करने से भी यही शुभ फल प्राप्त होता है। अठारह बार पाठ करने वाले मनुष्य को स्थिर लक्ष्मी प्राप्त होती है ॥१३॥

व्रण कुष्ठादिकं सर्वं नश्येद् द्वाविंशतिस्तवात् ।
पञ्चविंशतिजाप्येन संग्राम विजयी भवेत् ॥१४॥

बाईस बार पाठ करने से व्रण, कुष्ठ आदि नष्ट हो जाते हैं। पच्चीस बार पाठ करने से संग्राम में विजय प्राप्त होती है ॥१४॥

धर्मार्थी लभते धर्मं सप्तविंशति संख्यया ।
अर्थकामो लभेदर्थमेतत् संख्या विधानतः ॥१५॥

सत्ताईस बार पाठ करने से धर्मार्थी को धर्म का लाभ होता है। इसी संख्या में जप करने से अर्थ और काम की उपलब्धि भी होती है ॥१५॥

शत्रोरुच्चाटने घोरे परसैन्य प्रभञ्जने ।
प्राणान्तिके महोत्पाते कुलनाशे धनक्षये ॥१६॥

शत्रु द्वारा किए गए उच्चाटन, घोर कष्ट, शत्रु-सेना के विनाश प्राणान्तक, कुल-नाश तथा धन क्षय के योग ॥१६॥

शतवारं पठेद् यस्तु शमं याति न संशयः ।
राष्ट्रप्राप्तिं धनैश्वर्यं लभते च शतत्रयात् ॥१७॥

इस स्तोत्र का सौ बार पाठ करने से निस्सन्देह शमन हो जाते हैं तथा तीन सौ बार पाठ करने से देश एवं धन-ऐश्वर्य का लाभ होता है ॥१७॥

विशेषेणैव पुत्रार्थी पौनः पुन्यं दशावधि ।
सहस्रं प्रजपेद् यस्तु सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥१८॥

दस बार पुनः-पुनः अर्थात् १००० बार पाठ करने से पुत्रार्थी को पुत्र-लाभ होता है। हजार बार पाठ करने वाले की समस्त कामनाएँ पूर्ण होती हैं ॥१८॥

सङ्कटादिक कष्टं तु नाशमायाति तत्क्षणात् ।
वैरवृद्धौ वैरनाशे सहस्रावर्त्तनेन च ॥१९॥

हजार बार पाठ करने से संकट आदि कष्ट उसी क्षण दूर हो जाते हैं। वैर बढ़ जाने पर वैर का नाश हो जाता है ॥१९॥

राज्यलक्ष्मीमवाप्नोति सहस्रावर्तनान्नरः ।
शत्रवश्च पलायन्ते रटन्ते काकवद् दिवि ॥२०॥

इसका हजार बार जाप करने से राज्यलक्ष्मी प्राप्त होती है तथा जिस प्रकार कौए काँव-काँव करते हुए आकाश में उड़ जाते हैं, उसी प्रकार शत्रु भी भाग जाते हैं ॥२०॥

व्याधिवृद्धिं बन्धनं च शीघ्रं नाशयति ध्रुवम् ।
तथैव त्रिविधोत्पाते तथा चैवाति पातके ॥२१॥

व्याधि-वृद्धि, बन्धन आदि निश्चित रूप से शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। तीनों प्रकार के उत्पात तथा पाप भी नष्ट हो जातें हैं ॥२१॥

यशः प्राप्तेः समारम्भो नित्यं भक्ति समन्वितः ।
इत्यन्तमेवमादीनि सर्वाण्ययावर्तयेद् यदि ॥२२॥

जो व्यक्ति प्रतिदिन भक्तिपूर्वक इस स्तोत्र का पाठ करता है उसका यश चारों ओर फैल जाता है ॥२२॥

पुनः पुनरहं वच्ये विश्वासात् फलमुत्तमम् ।
अविश्वासो न कर्तव्यो यदीच्छेत् सिद्धिमात्मनः ॥२३॥

मैं यह बात बारम्बार कहता हूँ कि इस पर विश्वास करने से उत्तम फल प्राप्त होता है । जो व्यक्ति सिद्धि चाहता हो, उसे इस पर अविश्वास नहीं करना चाहिए ॥२३॥

अथः प्रयोगान् वच्यामि लोकानां प्रियकाम्यया ।
बिल्वमूलं समाश्रित्य मासं राज्यमवाप्नुयात् ॥२४॥

अब मैं लोकों के हित की इच्छा से इसके प्रयोगों का वर्णन करता हूँ—विल्ववृक्ष की जड़ पर बैठ कर एक मास तक इसका पाठ करने से राज्य की प्राप्ति होती है ॥२४॥

हुत्वा बिल्वफलैर्मासं मधुरत्रय योगतः ।
राज्यलक्ष्मीमवाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः ॥२५॥

एक मास तक मधु, खांड तथा गन्ने के रस सहित बिल्वफल द्वारा हवन करते हुए पाठ करने से राज्यलक्ष्मी प्राप्त होती है, यह सत्य है, सत्य है, इसमें सन्देह नहीं ॥२५॥

हुत्वा दशांशतो होमं कमलैः क्षीर संयुतैः ।
धनदेन समां लक्ष्मीं प्राप्नुयादुत्तमां ध्रुवम् ॥२६॥

दुग्ध सहित कमल पुष्पों द्वारा दशांश हवन करने से कुबेर के समान अतुल सम्पत्ति का निश्चित रूप से लाभ होता है ॥२६॥

हुत्वा प्रतिऋचं दिव्यैरुत्पलैर्घृतमिश्रितैः ।
देवराजसमां लक्ष्मी प्राप्नुयान्नात्र संशयः ॥२७॥

इस स्तोत्र के प्रत्येक मन्त्र के साथ घृत लगे उपलों (गोबर के कण्डों) द्वारा जो व्यक्ति हवन करता है, वह निस्सन्देह देवराज इन्द्र के समान लक्ष्मी (सम्पत्ति) प्राप्त करता है ॥२७॥

तद्विधिं च प्रवक्ष्यामि श्रुणुष्व वरवर्णिनि ।
निमन्त्रयेच्च पूर्वेद्यु र्विप्रान् विधि समन्वितान ॥२८॥

हे श्रेष्ठवर्णं वाली ! सुनो, अब मैं इस स्तोत्र की विधि का वर्णन करता हूँ। सर्वप्रथम इस स्तोत्र के ज्ञाता ब्राह्मणों को निमन्त्रित करें ॥२८॥

अलोलुपानृजून्दान्तान् शिष्टान् भक्तिसमन्वितान् ।
शुभलक्षण संयुक्तान् ब्राह्मणान् परियोजयेत् ॥२१॥

जो ब्राह्मण लोभ-रहित, सरल, संयमी, शिष्ट, भक्तियुक्त तथा शुभ लक्षण सम्पन्न हों, उन्हीं को एकत्र करें ॥२६॥

ज्ञार्केन्दु भृगु जीवे च सुयोगे सुतिथौ तथा ।
कर्के च यमघण्टादि दोषहीने स्थिरोदये ॥३०॥

बुध, रवि, सोम, शुक्र तथा गुरुवार को शुभयोग एवं शुभ तिथि में कर्कलग्न में तथा यमघण्टादि दोष रहित स्थिर लग्न में यह प्रयोग करना चाहिए ॥३०॥

वज्रकेतुग्रहोत्पाते गुर्वादित्यादिके तथा ।
महागुरौ विपन्ने च सन्दिग्धे कार्यवस्तुनि ॥३१॥

वज्रयोग, धूम्रकेतु-उदय, ग्रह-उत्पात, गुरु एवं सूर्य के विनाशकाल में, किसी श्रेष्ठ पुरुष की मृत्यु के समय तथा कार्यवस्तु में सन्देह होने पर ॥३१॥

प्रयोगं न तु कुर्वीत इत्यादावति दूषणे ।
हविष्याशी जपं कुर्यात् कारयेद् वाऽप्यनन्यधीः ॥३२॥

आदि दोषों के समय इसका प्रयोग न करें। अनुष्ठान के दिनों में हविष्याशी होकर जप करे तथा ब्राह्मणों को भी हविष्यान्न का ही भोजन करायें ॥३२॥

सहस्रत्रितयेनैव सर्वसम्पत्तिमाप्नुयात्।
कलौ प्राप्ते विशेषेण नाऽन्योपायोऽस्ति कश्चन ॥३३॥

इस विधि से तीन सहस्र बार जप करने से सब प्रकार की सम्पत्तियां प्राप्त होती हैं। विशेषतः कलिकाल में इसके अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं है ॥३३॥

॥ इत्यगस्त्य संहितायां ब्रह्माऽगस्त्य संवादे महाभारतोक्त विष्णु सहस्रनाम पाठ विधानम् समाप्तम् ॥

अथ श्रीविष्णु सहस्रनाम प्रारम्भः

ॐ विश्वं विष्णुर्वषट्कारो भूतभव्यभवत्प्रभु ।
भूतकृद्भूतभृद्भावो भूतात्मा भूतभावनः ॥१॥

भाषा-टीका—(१) विश्वम्—अर्थात् जो विश्वरूप हैं, (२) विष्णुः—जो सर्वव्याप्त हैं, (३) वषट्कारः- जो 'यज्ञपुरुष' हैं अर्थात् जिनके उद्देश्य से यज्ञ में 'वषट्' किया जाता है, (४) भूतभव्य-भवत्प्रभुः—जो भूत, भविष्य एवं वर्तमान, तीनों कालों के स्वामी हैं, (५) भूतकृत्—जो भूतों (प्राणियों) की रचना करते हैं, (६) भूतभृत्—जो भूतों (प्राणियों) को धारण कर उनका पालन करते हैं, (७) भावः—जो प्रपंच रूप होने के कारण भाव-स्वरूप हैं, (८) भूतात्मा - जो सब भूतों (प्राणियों) की आत्मा हैं, (९) भूतभावनः—जो भूतों (प्राणियों) को प्रिय हैं ॥ १ ॥

पूतात्मा परमात्मा च मुक्तानां परमा गतिः ।
अव्ययः पुरुषः साक्षी क्षेत्रज्ञोऽक्षर एव च ॥२॥

(१०) पूतात्मा—जो पवित्रात्मा हैं, (११) परमात्मा—जो श्रेष्ठ आत्मा हैं, (१२) मुक्तानां परमागतिः—जो मुक्त-पुरुषों की परमगति हैं, (१३) अव्ययः—जो अव्यय (विकार-रहित) हैं, (१४) पुरुषः जो अनादि पूर्णपुरुष हैं, (१५) साक्षी—जो सबके कर्मों के साक्षी हैं, (१६) क्षेत्रज्ञः—जो क्षेत्र (शरीर) के ज्ञाता हैं, (१७) अक्षरः—जिनका कभी क्षरण (नाश) नहीं होता ॥ २ ॥

योगी योगविदां नेता प्रधान पुरुषेश्वरः ।

नारसिंहवपुः श्रीमान् केशवः पुरुषोत्तमः ॥३॥

(१८) योगी—जो योग करने वाले हैं, (१९) योगविदांनेता—जो योगियों के नेता हैं, (२०) प्रधान पुरुषेश्वरः—जो प्रधान पुरुषेश्वर हैं, (२१) नारसिंहवपुः—जिनके शरीर में मनुष्य और सिंह का समन्वय है, (२२) श्रीमान्—जो 'श्री' युक्त हैं, (२३) केशवः—जो सुन्दर केशों वाले अथवा 'केशी' नामक दैत्य का वध करने वाले हैं, (२४) पुरुषोत्तमः- जो पुरुषों में श्रेष्ठ हैं ॥ ३ ॥

सर्वः शर्वः शिवः स्थाणुर्भूतादिर्निधिरव्ययः ।

सम्भवो भावनो भर्त्ता प्रभवः प्रभुरीश्वरः ॥४॥

(२५) सर्वः—जो सबको जानने वाले अथवा सब कुछ हैं, (२६) शर्वः—जो प्रलयकाल में सम्पूर्ण प्रजा का संहार करते हैं,(२७) शिवः—जो कल्याणकारी हैं, (२८) स्थाणुः—जो स्थिर हैं, (२९) भूतादिः—जो सब भूतों (प्राणियों) के आदिकारण हैं, (३०) अव्ययो निधिः—जो अविनाशी होने के कारण अव्यय-निधि (कभी समाप्त न होने वाले कोष) हैं, (३१) संभवः—जो स्वेच्छा से उत्पन्न हुए हैं, (३२) भावनः—

जो सबको प्रिय हैं अथवा सब भोक्ताओं को कर्मानुसार फल प्रदान करते हैं, (३३) भर्त्ता—जो भरण-पोषण करने वाले हैं, (३४) प्रभवः—जिनमें से सबकी उत्पत्ति हुई है, (३५) प्रभुः—जो सबके स्वामी हैं, (३६) ईश्वरः- जो ऐश्वर्यशाली हैं ॥ ४ ॥

स्वयम्भूः शम्भुरादित्यः पुष्कराक्षो महास्वनः ।
अनादिनिधनो धाता विधाता धातुरुत्तमः ॥५॥

(३७) स्वयंभू—जो स्वयं उत्पन्न हुए हैं, (३८) शम्भुः—जो सुख की भावना उत्पन्न करते हैं, (३९) आदित्यः - जो अदिति (पृथ्वी) के पति हैं, (४०) पुण्डरीकाक्षः—जो कमल के समान नेत्रों वाले हैं, (४१) महास्वनः—जो महान् घोष (स्वर) वाले हैं, (४२) अनादिनिधनः—जो जन्म-मृत्यु से परे हैं, (४३) धाता—जो धारण करने वाले हैं, (४४) विधाता— जो कर्म तथा फल के कर्त्ता हैं, (४५) धातु-रुत्तमः— जो धातुओं में सर्वश्रेष्ठ हैं ॥ ५ ॥

अप्रमेयो हृषीकेशः पद्मनाभोऽमरप्रभुः ।
विश्वकर्मा मनुस्त्वष्टा स्थविष्ठः स्थविरो ध्रुवः ॥६॥

(४६) अप्रमेयः—जो प्रत्यक्ष एवं अनुमानादि के विषय नहीं हैं, (४७) हृषीकेशः—जो इन्द्रियों को अधीन रखते हैं, (४८) पद्मनाभः—जिनकी नाभि से कमल निकला है, (४९) अमर प्रभुः—जो देवताओं के स्वामी हैं, (५०) विश्वकर्मा - जो विश्व का निर्माणकार्य करते हैं, (५१) मनुः - जिनका मनन किया जाता है, (५२) त्वष्टा - जो संहार के समय प्राणियों को क्षीण करते हैं, (५३) स्थविष्ठः - जो अत्यन्त स्थूल है, (५४) स्थविरो ध्रुवः - जो स्थिर तथा ध्रुव हैं ॥ ६ ॥

अग्राह्यःशाश्वतः कृष्णो लोहिताक्षः प्रतर्दनः ।
प्रभूतस्त्रिककुब्धाम पवित्रं मंगलं परम् ॥७॥

(५५) अग्राह्यः – जो कर्मेन्द्रियों द्वारा ग्रहण नहीं किये जा सकते, (५६) शाश्वतः – जो सदैव विद्यमान रहते हैं, (५७) कृष्णः – जो कृष्णवर्ण हैं, (५८) लोहिताक्षः – जो रक्तवर्ण नेत्रों वाले हैं, (५९) प्रतर्दनः – जो प्रलयकाल में सबका विनाश करते हैं, (६०) प्रभूतः – जो ऐश्वर्यादि गुणों से समृद्ध हैं, (६१) त्रिककुब्धाम – जो तीनों दिशाओं के धाम हैं, (६२) पवित्रम् – जो पवित्र हैं, (६३) मंगलं परम् – जो परम मङ्गल रूप हैं, ॥ ७ ॥

ईशानः प्राणदः प्राणो ज्येष्ठः श्रेष्ठः प्रजापतिः ।
हिरण्यगर्भो भूगर्भो माधवो मधुसूदनः ॥८॥

(६४) ईशानः – जो सब के नियन्ता हैं, (६५) प्राणदः – जो प्राण देने वाले हैं, (६६) प्राणः – जो प्राण स्वरूप हैं, (६७) ज्येष्ठः – जो बड़े हैं, (६८) श्रेष्ठः – जो श्रेष्ठ हैं, (६९) प्रजापतिः – जो प्रजा के स्वामी हैं, (७०) हिरण्यगर्भः – जो ब्रह्माण्ड रूपी हिरण्यमय अण्डे के गर्भ (भीतर) में स्थित हैं, (७१) भूगर्भः – जो पृथ्वी के गर्भ में स्थित हैं, (७२) माधवः – जो मधु-विद्या द्वारा जानने योग्य हैं, (७३) मधुसूदनः – जिन्होंने 'मधु' नामक दैत्य का संहार किया है ॥ ८ ॥

ईश्वरो विक्रमी धन्वी मेधावी विक्रमः क्रमः ।
अनुत्तमो दुराधर्षः कृतज्ञः कृतिरात्मवान् ॥९॥

(७४) ईश्वरः – जो सर्वशक्तिमान् हैं, (७५) विक्रमी – जो पराक्रम युक्त हैं, (७६) धन्वी – जो धनुष धारण करते हैं, (७७) मेधावी – जो मेधा (बुद्धि) सम्पन्न हैं, (७८) विक्रमः—जो संसार को लांघने की सामर्थ्य रखते हैं, (७९) क्रमः—जो क्रम स्वरूप हैं, (८०) अनुत्तमः—जिनसे उत्तम कोई नहीं है, (८१) दुराधर्षः – जिन्हें कोई पराजित नहीं कर सकता, (८२) कृतज्ञः—जो भक्तों के प्रति कृतज्ञ बने रहते हैं, (८३) कृतिः – जो कृति रूप हैं, (८४) आत्मवान्– जो अपनी आत्मा में ही प्रतिष्ठित हैं ॥ ९ ॥

सुरेशः शरणं शर्म विश्वरेताः प्रजाभवः ।
अहः संवत्सरो व्यालः प्रत्ययः सर्वदर्शनः ॥१०॥

(८५) सुरेशः – जो देवताओं के स्वामी हैं, (८६) शरणम्—जो सबकी शरण हैं, (८७) शर्मः—जो जो आनन्द स्वरूप हैं, (८८) विश्वरेताः—जो विश्व के जन्मदाता हैं, (८९) प्रजाभवः—जो सम्पूर्ण प्रजा को उत्पन्न करने वाले हैं, (९०) अहः जो प्रकाशरूप हैं, (९१) संवत्सरः—जो संवत्सर स्वरूप कालात्मा हैं, (९२) व्यालः—जो सर्पवत् हैं अथवा शेषनाग रूप हैं, (९३) प्रत्ययः—जो प्रज्ञारूप हैं, (९४) सर्वदर्शनः—जो सब कुछ देखते रहते हैं ॥ १० ॥

अजः सर्वेश्वरः सिद्धः सिद्धिः सर्वादिरच्युतः ।
वृषाकपिरमेयात्माः सर्वयोगविनिःसृतः ॥११॥

(९५) अजः—जो अजन्मा है, (९६) सर्वेश्वरः—जो सबके ईश्वर हैं, (९७) सिद्धः—जो सिद्धरूप हैं, (९८) सिद्धि—जो सिद्धि स्वरूप हैं, (९९) सर्वादिः – जो सबके आदिकारण हैं, (१००) अच्युतः – कभी

च्युत नहीं होते अर्थात् माया द्वारा गिराये नहीं जा सकते, (१०१) वृषाकपिः—जो धर्मस्वरूप हैं, (१०२) अमेयात्मा—जिनकी आत्मा अमेय (परिच्छेद-रहित) है, (१०३) सर्वयोग विनिःसृतः—जो सभी सम्बन्धों से रहित हैं ॥ ११ ॥

वसुर्वसुमनाः सत्यः समात्मा सम्मितः समः ।
अमोघः पुण्डरीकाक्षो वृषकर्मा वृषाकृतिः ॥१२॥

(१०४) वसुः—जो वसु स्वरूप हैं, (१०५) वसुमनाः—जो प्रशस्त मन वाले हैं, (१०६) सत्यः—जो सत्य स्वरूप हैं, (१०७) समात्मा—जो समान रूप से सभी की आत्मा हैं, (१०८) सम्मितः—जिन्हें समस्त पदार्थों से जाना जाता है, (१०९) समः—जो सम स्वरूप हैं, (११०) अमोघः—जिनका संकल्प व्यर्थ नहीं जाता, (१११) पुण्डरीकाक्षः—जो कमल जैसी आंखों वाले हैं, (११२) वृषकर्मा—जो धर्मरूपी कर्म करते हैं, (११३) वृषाकृतिः—जिन्होंने धर्महेतु वृष का शरीर धारण किया है ॥ १२ ॥

रुद्रो बहुशिरा बभ्रुर्विश्वयोनिः शुचिश्रवाः ।
अमृतः शाश्वतः स्थाणुर्वरारोहो महातपाः ॥१३॥

(११४) रुद्रः—जो प्रलयकाल में सबको रुलाते हैं अथवा जो सबको वाणी देते हैं, (११५) बहुशिराः—जिनके बहुत से शिर हैं, (११६) बभ्रुः—जो लोकों का भरण करते हैं, (११७) विश्वयोनिः—जिन्होंने विश्व को उत्पन्न किया है, (११८) शुचिश्रवाः—जो पवित्र कीर्ति वाले हैं, (११९) अमृतः—जो कभी मरते नहीं हैं, (१२०) शाश्वतास्थाणुः—जो नित्य और स्थिर हैं, (१२१) वरारोहः—जो सुन्दर आरोह (गोद) वाले हैं, (१२२) महातपाः—जो महान् तपस्वी हैं ॥१३॥

सर्वगः सर्वविद्भानुर्विष्वक्सेनो जनार्दनः ।
वेदो वेदविदव्यंगो वेदांगो वेदवित् कविः ॥१४॥

(१२३) सर्वगः–जिनकी सर्वत्र गति है, (१२४) सर्वविद्भानुः—जो सब कुछ जानते हैं एवं सर्वत्र भासित हैं, (१२५) विष्वक्सेनः—जो शत्रु-सैन्य संहारक हैं, (१२६) जनार्दनः—जो भक्तों के रक्षक हैं, (१२७) वेदः—जो वेद स्वरूप हैं, (१२८) वेदविद्—जो वेदों को जानते हैं, (१२९) अव्यङ्गः—जो व्यक्त नहीं हैं, (१३०) वेदांगः—वेद जिनके अंग हैं, (१३१) वेद्वित्ः—जो वेदों को विचारते हैं, (१३२) कविः—जो कवि हैं ॥१४॥

लोकाध्यक्षः सुराध्यक्षो धर्माध्यक्षः कृताकृतः ।
चतुरात्मा चतुर्व्यूहश्चतुर्दंष्ट्रश्चतुर्भुजः ॥१५॥

(१३३) लोकाध्यक्षः—जो सभी लोकों के स्वामी हैं, (१३४) सुराध्यक्षः—जो देवताओं के स्वामी हैं, (१३५) धर्माध्यक्षः—जो धर्म के स्वामी हैं, (१३६) कृताकृतः—जो कार्य-कारण रूप हैं. (१३७) चतुरात्मा—जो चारों प्रकार की विभूतियों से मुक्त हैं, (१३८) चतुर्व्यूहः—जो चारों प्रकार के व्यूहों से युक्त हैं, (१३९) चतुर्दंष्ट्रः—जो चार दाढ़ों वाले हैं, (१४०) चतुर्भुजः—जो चार भुजाओं वाले हैं ॥१५॥

भ्राजिष्णुर्भोजनं भोक्ता सहिष्णुर्जगदादिजः ।
अनघो विजयो जेता विश्वयोनिः पुनर्वसुः ॥१६॥

(१४१) भ्राजिष्णु:—जो प्रकाशकर्त्ता हैं, (१४२) भोजनः—जो भोज्य रूप हैं, (१४३) भोक्ता:—जो उपभोग करने वाले हैं, (१४४) सहिष्णु:—जो सहनशील हैं, (१४५) जगदादिजः—जो संसार में सर्व प्रथम उत्पन्न हुए हैं, (१४६) अनघः—जो पाप-रहित हैं, (१४७) विजयः—जो विजय स्वरूप हैं, (१४८) जेताः—जो जय पाने वाले हैं, (१४९) विश्वयोनिः—जो विश्व को उत्पन्न करने वाले हैं, (१५०) पुनर्वसुः—जो क्षेत्रज्ञरूप से सबमें निवास करते हैं ॥१६॥

उपेन्द्रो वामनः प्रांशुरमोघः शुचिरूर्जितः।
अतीन्द्रः संग्रहः सर्गो धृतात्मा नियमो यमः ॥१७॥

(१५१) उपेन्द्रः—जो इन्द्र के छोटे भाई हैं, (१५२) वामनः—जो वामन रूपधारी हैं, (१५३) प्रांशुः—जो विराट्रूपधारी हैं, (१५४) अमोघः जिनकी चेष्टा निष्फल नहीं जाती, (१५५) शुचिः—जो पवित्र हैं अथवा पवित्र करने वाले हैं, (१५६) ऊर्जितः—जो ऊर्जावान् हैं, (१५७) अतीन्द्रः—जो इन्द्र से भी बड़े हैं (१५८) संग्रहः—जो सबका संग्रह करते हैं, (१५९) सर्गः—जो सृज्य रूप जगत् के कारण हैं, (१६०) धृतात्मा—जो आत्माओं को धारण करते हैं, (१६१) नियमः—जो नियमित करते हैं, (१६२) यमः—जो नियमन करने वाले यम स्वरूप हैं ॥१७॥

वेद्यो वैद्यः सदायोगी वीरहा माधवो मधुः।
अतीन्द्रियो महामायो महोत्साहो महाबलः ॥१८॥

(१६३) वेद्यः—जो जानने योग्य हैं, (१६४) वैद्यः—जो सब कुछ जानते हैं, (१६५) सदायोगी—जो सदैव योगीरूप हैं, (१६६) वीरहा—जो दुष्ट वीरों का नाश करने वाले हैं, (१६७) माधवः—जो मायारूपी विद्या के पति हैं, (१६८) मधुः—जो मधु के समान मधुर हैं, (१६९) अतीन्द्रियः—जो इन्द्रियों से परे हैं, (१७०) महामायः—जो सबसे बड़े मायावी हैं, (१७१) महोत्साहः—जो महान् उत्साही हैं, (१७२) महाबलः—जो महाबली हैं ॥१८॥

महाबुद्धिर्महावीर्यो महाशक्तिर्महाद्युतिः ।
अनिर्देश्यवपुः श्रीमानमेयात्मा महाद्रिधृक् ॥१९॥

(१७३) महाबुद्धि—जो महान् बुद्धिमान् हैं, (१७४) महावीर्यः—जो बड़े वीर्यवान् हैं, (१७५) महाशक्तिः—जो महान् शक्तिशाली हैं, (१७६) महाद्युतिः—जो बड़े प्रकाशवान् हैं, (१७७) अनिर्देश्यवपुः—जिन्हें अन्य के द्वारा निर्दिष्ट नहीं किया जा सकता, (१७८) श्रीमान्—जो ऐश्वर्य युक्त हैं, (१७९) अमेयात्मा—जिनकी बुद्धि का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, (१८०) महाद्रिधृक्—जिन्होंने समुद्र मंथन के समय मंदराचल धारण किया था ॥१९॥

महेष्वासो महीभर्त्ता श्रीनिवासः सतांगतिः ।
अनिरुद्धः सुरानन्दो गोविन्दो गोविदाम्पतिः ॥२०॥

(१८१) महेष्वासः—जो महान् धनुष वाले हैं, (१८२) महीभर्त्ता—जो पृथ्वी के उद्धारक स्वामी हैं, (१८३) श्रीनिवासः—जिनके घर लक्ष्मी निवास करती हैं, (१८४) सतांगतिः—जो सत्पुरुषों की गति हैं,

(१८५) अनिरुद्धः—जो किसी से निरुद्ध नहीं होते, (१८६) सुरानन्दः—जो देवताओं को आनन्दित करते हैं, (१८७) गोविन्दः—जो गायों अथवा इन्द्रियों के स्वामी हैं, (१८८) गोविदांपतिः—जो इन्द्रिय-ज्ञाताओं के स्वामी हैं ॥२०॥

मरीचिर्दमनो हंसः सुपर्णो भुजगोत्तमः ।
हिरण्यनाभः सुतपाः पद्मनाभः प्रजापतिः ॥२१॥

(१८९) मरीचिः—जो तेजस्वी हैं, (१९०) दमनः—जो दमनकर्त्ता हैं, (१९१) हंसः—जो हंस (प्राण) रूप हैं, (१९२) सुपर्णः—जो सुन्दर पंखों वाले गरुड़रूप हैं, (१९३) भुजगोत्तमः—जो शेष, वासुकि आदि भुजंगों में सर्वोत्तम हैं, (१९४) हिरण्यनाभः—जो सुवर्णमय नाभिवाले हैं, (१९५) सुतपाः—जो श्रेष्ठ तपस्वी हैं, (१९६) पद्मनाभः—जिनकी नाभि पद्म के समान है, (१९७) प्रजापतिः—जो प्रजा के स्वामी हैं ॥२१॥

अमृत्युः सर्वदृक् सिंहः सन्धाता सन्धिमान् स्थिरः ।
अजो दुर्मर्षणः शास्ता विश्रुतात्मा सुरारिहा ॥२२॥

(१९८) अमृत्युः—जिनकी मृत्यु नहीं होती, (१९९) सर्वदृक्—जो सबको देखते हैं, (२००) सिंहः—जो सिंह स्वरूप हैं, (२०१) संधाता—जो प्राणियों को कर्मफलों से संयुक्त करते हैं, (२०२) संधिमान्—जो कर्मफलों की संधिस्वरूप हैं, (२०३) स्थिरः—जो सदैव स्थिर बने रहते हैं, (२०४) अजः—जो अजन्मा हैं, (२०५) दुर्मर्षणः—जिनको सहन नहीं किया जा सकता, (२०६) शास्ता—जो अनुशासन-

कर्त्ता हैं, (२०७) विश्रुतात्मा—जो विशिष्ट आत्मा के रूप में प्रसिद्ध हैं, (२०८) सुरारिहा—जो देवताओं के शत्रुओं का संहार करते हैं ॥२२॥

गुरुर्गुरुत्तमो धामः सत्यः सत्यपराक्रमः।
निमिषोऽनिमिषः स्रग्वी वाचस्पतिरुदारधीः ॥२३॥

(२०९) गुरुः—जो सबके गुरु हैं, (२१०) गुरुतमः—जो गुरुओं में श्रेष्ठ हैं, (२११) धामः—जो सबके आश्रय हैं, (२१२) सत्यः—जो सत्य स्वरूप हैं, (२१३) सत्यपराक्रमः—जिनका पराक्रम सत्य-सिद्ध होता है, (२१४) निमिषः—जो निमिष रूप हैं, (२१५) अनिमिषः—जो निमेष-रहित भी हैं, (२१६) स्रग्वी—ओ भूत-तन्मात्रा की माला धारण करते हैं, (२१७) वाचस्पतिरुदारधीः—जो वाणी के पति तथा उदार बुद्धि वाले हैं ॥२३॥

अग्रणीर्ग्रामणी श्रीमान् न्यायो नेता समीरणः।
सहस्रमूर्धा विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥२४॥

(२१८) अग्रणीः—जो अग्रगण्य हैं, (२१९) ग्रामणी—जो भूत ग्राम के नेता होने के कारण ग्रामणी हैं, (२२०) श्रीमान्—जो श्री (कान्ति) युक्त हैं, (२२१) न्यायः—जो न्याय स्वरूप हैं, (२२२) नेता—जो नेतृत्वगुण सम्पन्न हैं, (२२३) समीरणः—जो वायुस्वरूप हैं, (२२४) सहस्रमूर्द्धा—जो सहस्र शिरों वाले हैं, (२२५) विश्वात्मा—जो विश्व की आत्मा हैं, (२२६) सहस्राक्षः—जो सहस्र आंखों वाले हैं, (२२७) सहस्रपात्—जो सहस्र चरणों वाले हैं ॥ २४ ॥

आवर्तनो निवृत्तात्मा संवृतः सम्प्रमर्दनः ।
अहः संवर्तको वह्निरनिलो धरणीधर ॥२५॥

(२२८) आवर्त्तनः—जो आवर्तन (चक्र) स्वरूप हैं, (२२९) निवृत्तात्मा—जो संसाररूपी बन्धन से मुक्त आत्मा हैं, (२३०) संवृत्तः—जो संसार को आच्छाछित किये हुए हैं, (२३१) संप्रमर्दनः—जो सब का सब ओर से मर्दन करते हैं, (२३२) अहः संवर्त्तकः—जो सम्यक् रूप से निरन्तर प्रवर्तन करते रहते हैं, (२३३) वह्निः—जो अग्नि स्वरूप हैं, (२३४) अनिलः—जो वायु स्वरूप हैं, धरणीधरः—जो पृथ्वी को धारण करने वाले हैं ॥ २५ ॥

सुप्रसादः प्रसन्नात्मा विश्वधृग्विश्वभुग्विभुः ।
सत्कर्त्ता सत्कृतः साधुर्जन्हुर्नारायणो नरः ॥२६॥

(२३६) सुप्रसादः—जो श्रेष्ठ कृपा देते हैं, (२३७) प्रसन्नात्मा—जो स्वभाव से ही प्रसन्न रहते हैं, (२३८) विश्वधृग्—जो विश्व को धारण किए हैं, (२३९) विश्वभुग्—जो विश्व का भक्षण (प्रलयकाल में) करते हैं, (२४०) विभुः—जो विविध स्वरूप वाले हैं, (२४१) सत्कर्त्ता—जो सत्कार करने वाले हैं, (२४२) सत्कृतः—जो सत्कार किये गए हैं, (२४३) साधुः—जो सज्जन हैं, (२४४) जन्हुः जो जीवों का वहन करते हैं, (२४५) नारायणः—जो नारायण (जल में निवास करने वाले) हैं, (२४६) नरः—जो सनातन नर स्वरूप हैं ॥ २६ ॥

असंख्येयोऽप्रमेयात्मा विशिष्टः शिष्टकृच्छुचिः ।
सिद्धार्थः सिद्धसंकल्पः सिद्धदः सिद्धिसाधनः ॥२७॥

(२४७) असंख्येयः—जो असंख्य (गणनातीत) हैं, (२४८) अप्रमेयः—जो अप्रमेय हैं, (२४९) विशिष्टः—जो विशिष्ट हैं, (२५०) शिष्टकृत्—जो शिष्टों का पालन करते हैं, (२५१) शुचिः—जो पवित्र हैं, (२५२) सिद्धार्थः—जिन्हें अभीष्ट की सिद्धि हो चुकी है, (२५३) सिद्ध सङ्कल्पः—जिनका सङ्कल्प सिद्ध हो चुका है, (२५४) सिद्धिदः—जो सिद्धि देने वाले हैं, (२५५) सिद्धि साधनः—जो सिद्धि प्राप्त करने के साधन हैं ॥ २७ ॥

वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदरः ।
वर्धनो वर्धमानश्च विविक्तः श्रुतिसागरः ॥२८॥

(२५६) वृषाही—जो धर्मरूपी वृष के प्रकाश के आश्रय हैं, (२५७) वृषभः—जो धर्मरूप वृषभ हैं, (२५८) विष्णुः—जो सब ओर व्याप्त हैं, (२५९) वृषपर्वा—जो धर्मरूप सीढ़ी में अवस्थित हैं, (२६०) वृषोदरः जो धर्मरूपी वृष के उदर जैसे हैं, (२६१) वर्धनः—जो बढ़ाने वाले हैं, (२६२) वर्धमानः—जो बढ़ते रहते हैं, (२६३) विविक्तः—जो सबसे पृथक् रहते हैं, (२६४) श्रुतिसागरः—जो वेदों के समुद्र हैं ॥ २८ ॥

सुभुजो दुर्धरो वाग्मी महेन्द्रो वसुदो वसुः ।
नैकरूपो बृहद्रूपः शिपिविष्टः प्रकाशनः ॥२९॥

(२६५) सुभुजः—जो सुन्दर भुजाओं वाले हैं, (२६६) दुर्धरः—जिन्हें कोई धारण नहीं कर सकता, अथवा जिन्हें मुमुक्षुगण बड़ी कठिनाई से ही अपने हृदय में धारण कर पाते हैं, (२६७) वाग्मी – जो श्रेष्ठ वक्ता हैं, (२६८) महेन्द्रः—जो इन्द्र के भी इन्द्र हैं, (२६९) वसुदः—जो धन अथवा वायु देने वाले हैं, (२७०) वसुः—जो स्वयं वसु (धन अथवा वायु) भी हैं, (२७१) नैकरूपः—जो अनेक रूपों वाले हैं, (२७२) बृहद्रूपः—जो बड़े महान् रूपों वाले हैं, (२७३) शिपिविष्टः—जो पशुओं में यज्ञ रूप से अथवा किरणों में प्रकाश रूप से अवस्थित रहते हैं, (२७४) प्रकाशनः—जो प्रकाशित करने वाले ।। २९ ।।

ओजस्तेजो द्युतिधरः प्रकाशात्मा प्रतापिनः ।
ऋद्धः स्पष्टाक्षरो मन्त्रश्चन्द्रांशुर्भास्करद्युतिः ॥३०॥

(२७५) ओजस्तेजोद्युतिधरः—जो ओज, तेज तथा द्युति को धारण करने वाले हैं, (२७६) प्रकाशात्मा—जिनकी आत्मा प्रकाश स्वरूप है, (२७७) प्रतापनः—जो विश्व को अपनी विभूतियों से तप्त (प्रकाशित) करते हैं, (२७८) ऋद्धः जो ज्ञान-वैराग्यादि से सम्पन्न हैं, (२७९) स्पष्टाक्षरः—जो ॐकार रूप स्पष्ट अक्षर वाले हैं, (२८०) मन्त्रः—जो मन्त्र स्वरूप हैं, (२८१) चन्द्रांशुः – जो चन्द्रमा के समान शीतलता देने वाले हैं, (२८२) भास्करद्युतिः—जो सूर्य के समान द्युतिशाली हैं ।। ३० ।।

अमृतांशूद्भवोभानुः शशिबिन्दुः सुरेश्वरः ।
औषधं जगतःसेतुः सत्यधर्म पराक्रमः ॥३१॥

(२८३) अमृतांशूद्भवः—जिनके द्वारा चन्द्रमा की उत्पत्ति हुई है, (२८४) भानुः—जो सर्वत्र

भासित हैं, (२८५) शशबिन्दुः—जिस प्रकार चन्द्रमा औषधियों का पोषण करता है, उसी प्रकार जो सब प्राणियों का पोषण करते हैं। (२८६) सुरेश्वरः—जो देवताओं के स्वामी हैं, (२८७) औषधम्—जो औषध रूप हैं, (२८८) जगतःसेतु—जो संसार रूपी समुद्र को पार करने के लिए सेतु स्वरूप हैं, (२८९) सत्यधर्मपराक्रमः—जो सत्य-धर्म के पराक्रमी हैं ॥३१॥

भूतभव्यभवन्नाथः पवनः पावनोऽनलः ।
कामहा कामकृत्कांतः कामः कामप्रदः प्रभुः ॥३२॥

(२९०) भूतभव्यभवन्नाथः—जो भूत, भविष्य तथा वर्तमान कालीन प्राणियों के स्वामी हैं। (२९१) पवनः—जो पवन स्वरूप हैं, (२९२) पावनः—जो पवित्र हैं, (२९३) अनलः-जो अग्निरूप अथवा गंधहीन हैं, (२९४) कामहा—जो कामनाओं को नष्ट करते हैं, (२९५) कामकृत्—जो कामनाओं को पूर्ण करते हैं, (२९६) कान्तः—जो अत्यन्त सुन्दर हैं, (२९७) जो काम स्वरूप हैं, (२९८) कामप्रदः—जो कामनाओं की पूर्ति करने वाले हैं, (२९९) प्रभुः—जो अतिशय होने के कारण सब से बड़े हैं ॥३२॥

युगादिकृद्युगावर्तो नैकमायोमहाशनः ।
अदृश्योऽव्यक्तरूपश्च सहस्रजिदनन्तजित् ॥३३॥

(३००) युगादिकृत्—जो युग के आदिकर्ता हैं, (३०१) युगावर्त्तः—जो युगों की आवृत्ति करते हैं, (३०२) नैकमायः—जो अनेक मायाओं के ज्ञाता हैं, (३०३) महाशनः—जो कल्पान्त में सब को ग्रस

लेने के कारण बहुभोजी हैं, (३०४) अदृश्यः—जो अदृश्य रहते हैं, (३०५) व्यक्तरूपः—जो व्यक्त रूप वाले भी हैं, (३०६) सहस्रजित्—जो सहस्रों पर विजय प्राप्त करते हैं, (३०७) अनन्तजित्—जो अनन्त विजयी हैं। ३३॥

इष्टोऽविशिष्टः शिष्टेष्टः शिखण्डी नहुषो वृषः ।
क्रोधहा क्रोधकृतकर्ता विश्वबाहुर्महीधरः ॥३४॥

(३०८) इष्टः—जो सब के इष्ट हैं, (३०९) अविशिष्टः—जो अविशिष्ट भी हैं, (३१०) शिष्टेष्टः—जो शिष्ट जनों के इष्ट हैं, (३११) शिखण्डी—जो मयूरशिखा को सिर पर धारण करते हैं, (३१२) नहुषः—जो प्राणियों को माया में बांधते हैं, (३१३) वृषः—जो धर्मस्वरूप कामनाओं की वर्षा करते हैं, (३१४) क्रोधहाः—जो क्रोध को नष्ट करते हैं, (३१५) क्रोधकृत्कर्त्ता—क्रोध करने वाले दैत्यों के विनाशक हैं, (३१६) विश्वबाहुः—जो विश्व के बाहु (आश्रय) स्वरूप हैं, (३१७) महीधरः—जो पृथ्वी को धारण करने वाले हैं ॥३४॥

अच्युतः प्रथितः प्राणःप्राणदो वासवानुजः ।
अपांनिधिरधिष्ठानमप्रमत्तः प्रतिष्ठितः ॥३५॥

(३१८) अच्युतः—जो विकार रहित हैं, (३१९) प्रथितः—जो जगतोत्पत्ति आदि कार्यों के कारण प्रथित हैं, (३२०) प्राणः—जो हिरण्यगर्भादि रूप से प्रजा को जीवन देते हैं, (३२१) प्राणदः—जो प्राण देने वाले हैं, (३२२) वासवानुजः—जो वासव के अनुज हैं, (३२३) अपांनिधिः—जो जल के भण्डार

(समुद्र) हैं, (३२४) अधिष्ठानम्—जो सभी प्राणियों के अधिष्ठान हैं, (३२५) अप्रमत्तः—जो प्रमाद रहित हैं, (३२६) प्रतिष्ठितः जो प्रतिष्ठा प्राप्त हैं ॥३५॥

स्कन्दः स्कन्दधरो धुर्यो वरदो वायुवाहनः ।
वासुदेवो बृहद्भानुरादिदेवः पुरन्दरः ॥३६॥

(३२७) स्कन्दः—जो स्कन्द रूप हैं, (३२८) स्कन्दधरः—जो स्कन्ध को धारण करते हैं, (३२९) धुर्यः—जो धारण करने वाले हैं, (३३०) वरदः—जो वरदायक हैं, (३३१) वायु-वाहनः—जो वायु को चलाते हैं, (३३२) वासुदेवः—जो वसुदेव के पुत्र हैं अथवा सब में निवास करते हैं, (३३३) बृहद्-भानुः—जो महान् सूर्य हैं, (३३४) आदिदेवः—जो आदि देवता हैं, (३३५) पुरन्दरः—जो देवशत्रुओं के पुरों (नगरों) का नाश करने वाले हैं ॥३६॥

अशोकस्तारणस्तारः शूरः शौरिर्जनेश्वरः ।
अनुकूलःशतावर्तः पद्मी पद्मनिभेक्षणः ॥३७॥

(३३६) अशोकः—जो शोक रहित हैं, (३३७) तारणः—जो संसार सागर से तारने वाले हैं, (३३८) तारः—जो मृत्युरूपी भय से तारते हैं, (३३९) शूरः—जो शूर हैं, (३४०) शौरिः—जो शूरसेन के वंश में उत्पन्न हुए हैं, (३४१) जनेश्वरः—जो जीवमात्र के ईश्वर हैं, (३४२) अनुकूलः—जो सबके अनुकूल रहते हैं, (३४३) शतावर्त्तः—जो सैकड़ों अवतार लेते हैं, (३४४) पद्मीः—जो हाथ में पद्म धारण करते हैं, (३४५) पद्मनिभेक्षणः—जो पद्म के समान नेत्रों वाले हैं ॥३७॥

पद्मनाभोऽरविन्दाक्षः पद्मगर्भः शरीरभृत् ।
महर्द्धिर्ऋद्धो वृद्धात्मा महाक्षो गरुडध्वजः ॥ ३८ ॥

(३४६) पद्मनाभः—जिनकी नाभि में पद्म है, (३४७) अरविन्दाक्षः—जो कमल जैसी आंखों वाले हैं, (३४८) पद्मगर्भः—जो हृदयरूपी पद्म के गर्भ में निवास करते हैं, (३४९) शरीरभृत्—जो शरीर का पोषण करते हैं, (३५०) महर्द्धिः—जो महान् ऋद्धि स्वरूप हैं, (३५१) ऋद्धः—जो प्रपंची होने के कारण ऋद्ध स्वरूप हैं, (३५२) वृद्धात्मा:—जो पुरातन आत्मा वाले हैं, (३५३) महाक्षः—जो बड़ी-बड़ी आंखों वाले हैं, (३५४) गरुड़ध्वजः—जिनकी ध्वजा पर गरुड़-चिह्न है ॥३८॥

अतुलः शरभो भीमः समयज्ञो हविर्हरिः ।
सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान् समितिञ्जयः ॥ ३९ ॥

(३५५) अतुलः—जो अतुलनीय हैं, (३५६) शरभः—जो शीर्यमाण शरीर में प्रत्यगात्मा रूप में भासित हैं, (३५७) भीमः—जो भीम रूप हैं, (३५८) समयज्ञः—जो सब में समभाव रखने के कारण समयज्ञ हैं, (३५९) हविर्हरिः—जो यज्ञ में हवि का हरण (प्राप्त) करते हैं, (३६०) सर्वलक्षण लक्षण्यः—जो सब लक्षणों से परिलक्षित हैं, (३६१) लक्ष्मीवान्—जो लक्ष्मी युक्त हैं, (३६२) समितिञ्जयः—जो युद्ध-विजयी हैं ॥३९॥

विक्षरो रोहितो मार्गो हेतुर्दामोदरः सहः ।
महीधरो महाभागो वेगवानमिताशनः ॥ ४० ॥

(३६३) विक्षरः—जिनका कभी नाश नहीं होता, (३६४) रोहितः—जो रोहितवर्ण के हैं, (३६५) मार्गः—जो मुमुक्षुजनों के मार्ग हैं, (३६६) हेतुः—जो संसार के हेतु हैं, (३६७) दामोदरः—जो दम आदि के कारण उदारमति हैं, (३६८) सहः—जो सबके साथी हैं, (३६९) महीधरः—जो पृथ्वी को धारण करते हैं, (३७०) महाभागः—जो महान् भाग्यशाली हैं, (३७१) वेगवान्—जो तीव्रगति वाले हैं, (३७२) अमिताशनः—जो प्रलयकाल में अत्यधिक भोजन करने वाले हैं अर्थात् सबको खा लेते हैं ॥४०॥

उद्भवः क्षोभणोदेवः श्रीगर्भः परमेश्वरः।
करणं कारणं कर्ता विकर्ता गहनो गुहः ॥ ४१ ॥

(३७३) उद्भवः—जो सबकी उत्पत्ति के उपादान हैं, (३७४) क्षोभणः—जो क्षोभ उत्पन्न करने वाले हैं, (३७५) देवः—जो देवता हैं, (३७६) श्रीगर्भः—जिनके गर्भ में लक्ष्मी अथवा सबका कल्याण अवस्थित है, (३७७) परमेश्वरः—जो परम ईश्वर हैं. (३७८) करणः—जो संसार की उत्पत्ति के साधन होने के कारण करण हैं, (३७९) कारणं—जो संसार की उत्पत्ति के उपादान कारण हैं, (३८०) कर्त्ताः—जो सब कुछ करनें वाले हैं, (३८१) विकर्त्ताः—जो विचित्र कार्यों को करने वाले हैं, (३८२) गहनः—जो गहरे स्वरूप वाले हैं, (३८) ग्रहः—जो माया द्वारा निज स्वरूप को ढांके रखते हैं ॥४१॥

व्यवसायो व्यवस्थानः संस्थानः स्थानदो ध्रुवः।
परर्द्धिः परमः स्पष्टः तुष्टः पुष्टः शुभेक्षणः ॥ ४२ ॥

(३८४) व्यवसायः—जो व्यवसाय रूप हैं, (३८५) व्यवस्थानः—जिनमें सबकी व्यवस्था है, (३८६) संस्थानः—जो सबके स्थान हैं, (३८७) स्थानदः—जो सबको स्थान देने वाले हैं, (३८८) ध्रुवः—जो निश्चल हैं, (३८९) परर्द्धिः—जो उत्कृष्ट विभूति वाले हैं. (३९०) परमस्पष्टः—जो अत्यन्त स्पष्ट हैं, (३९१) तुष्टः—जो सन्तुष्ट प्रकृति के हैं, (३९२) पुष्टः—जो पुष्ट स्वरूप हैं, (३९३) शुभेक्षणः—जिनका दर्शन शुभकारक है ॥४२॥

रामोविरामो विरजो मार्गो नेयो नयोऽनयः ।
वीरः शक्तिमतां श्रेष्ठो धर्मो धर्मविदुत्तमः ॥ ४३ ॥

(३९४) रामः—योगीजन जिनमें रमण करते हैं, (३९५) विरामः—जिनमें प्राणी विराम पाते हैं, (३९६) विरजः—जो विषयों से विरक्त हैं. (३९७) मार्गः—जो सबके पथ हैं, (३९८) नेयः—जो सम्यक् ज्ञान द्वारा उपलब्ध होते हैं, (३९९) नयः—जो नीति स्वरूप हैं, (४००) अनयः—जिनका कोई नेता नहीं है, (४०१)वीरः—जो वीर हैं, (४०२) शक्तिमतां श्रेष्ठः—जो शक्तिशालियों में श्रेष्ठ हैं, (४०३) धर्मः—जो सबको धारण करते हैं, (४०४) धर्मविदुत्तमः—जो धर्म के श्रेष्ठ ज्ञाता हैं ॥४३॥

वैकुण्ठः पुरुषः प्राणः प्राणदः प्रणवः पृथुः ।
हिरण्यगर्भः शत्रुघ्नो व्याप्तो वायुरधोक्षजः ॥ ४४ ॥

(४०५) वैकुण्ठः—जो वैकुण्ठ स्वरूप हैं, (४०६) पुरुषः—जो प्रधान पुरुष हैं, (४०७) प्राणः—जो प्राणरूप हैं, (४०८) प्राणदः—जो प्राणों को देते वाले हैं, (४०९) प्रणवः—जो ॐकार स्वरूप हैं,

(४१०) वृथुः—जो विस्तृत हैं, (४११) हिरण्यगर्भः—जो हिरण्य अण्ड को धारण करने वाले हैं, (४१२) शत्रुघ्नः—जो शत्रु नाशक हैं, (४१३) व्याप्तः—जो सर्वत्र व्याप्त हैं, (४१४) वायुः—जो वायु रूप हैं, (४१५) अधोक्षजः—जो कभी पृथ्वी और आकाश के मध्य विराट् रूप में विद्यमान हैं ।।४४।।

ऋतुःसुदर्शनः कालः परमेष्ठीपरिग्रहः ।
उग्रः संवत्सरो दक्षो विश्रामो विश्वदक्षिणः ॥ ४५ ॥

(४१६) ऋतुः—जो ऋतुरूप हैं, (४१७) सुदर्शनः—जो देखने में सुन्दर हैं, (४१८) कालः—जो काल स्वरूप हैं, (४१९) परमेष्ठी जो हृदयाकाश के भीतर प्रकृष्ट महिमा से स्थित हैं, (४२०) परिग्रहः- जो परिग्रही हैं, (४२१) उग्रः—जो उग्र रूप हैं, (४२२) संवत्सरः—जो सम्वत्सर रूप हैं, (४२३) दक्षः—जो चतुर हैं, (४२४) विश्रामः—जो सब के विश्राम स्थल हैं, (४२५) विश्व दक्षिणः—जो विश्व के सभी कार्यों में दक्ष हैं ।।४५।।

विस्तारः स्थावरः स्थाणुः प्रमाणं बीजमव्ययम् ।
अर्थोऽनर्थो महाकोशो महाभोगो महाधनः ॥ ४६ ॥

(४२६) विस्तारः—जो सर्वत्र फैले हुए हैं, (४२७) स्थावर स्थाणुः—जो स्थावर-स्थाणु (गंभीर स्थितिशील) हैं, (४२८) प्रमाणं—जो प्रमाण रूप हैं, (४२९) बीजमव्ययम्—जो अव्यय बीज रूप हैं, (४३०) अर्थः—जो अर्थ रूप हैं, (४३१) अनर्थः—जो अनर्थ रूप भी हैं, (४३२) मताकोशः—जो सब से

बड़े भण्डार हैं, (४३३) महाभोग:—जो सब से बड़े भोग स्वरूप हैं, (४३४) महाधन:—जो सब से बड़े धन हैं ॥४६॥

अनिर्विण्णः स्थविष्ठोऽभूर्धर्मयूपो महामखः ।
नक्षत्रनेमिर्नक्षत्री क्षमः क्षामः समीहनः ॥ ४७ ॥

(४३५) अनिर्विण्ण:—जो सम्पूर्ण कामनाओं को प्राप्त करने के कारण उदासीन नहीं हैं, (४३६) स्थविष्ठ:—जो वैराग्य रूप से स्थित हैं, (४३७) अभू:—जो अजन्मा हैं, (४३८) धर्मयूप:—जो धर्म के स्तम्भ हैं, (४३९) महामख:—जो महा यज्ञ रूप हैं, (४४०) नक्षत्रनेमि: जो नक्षत्रों के मध्य स्थल हैं, (४४१) नक्षत्री—जो नक्षत्र रूप हैं, (४४२) क्षम:—जो सक्षम हैं, (४४३) क्षाम:—जो विकारों से रहित हैं, (४४४) समीहन:—जो सृष्टि हेतु सम्यक् रूप से सचेष्ट बने रहते हैं ॥४७॥

यज्ञ इज्यो महेज्यश्च क्रतुः सत्रं सतां गतिः ।
सर्वदर्शी विमुक्तात्मा सर्वज्ञो ज्ञानमुत्तमम् ॥ ४८ ॥

(४४५) यक्ष:—जो यक्ष रूप हैं, (४४६) ईज्य:—जो पूजनीय हैं, (४४७) महेज्य:—जो मोक्षदायक हैं, (४४८) क्रतु:—जो यूप सहित यक्ष रूप हैं, (४४९) सत्रं—जो सत्र रूप हैं, (४५०) सतांगति:—जो सज्जनों की गति हैं (४५१) सर्वदर्शी—जो सब कुछ देखने वाले हैं, (४५२) विमुक्तात्मा—जिन की आत्मा विमुक्त है, (४५३) सर्वज्ञ:—जो सब कुछ जानते हैं, (४५४) ज्ञानमुत्तमम्—जो श्रेष्ठ ज्ञान रूप हैं ॥४८॥

सुव्रतः सुमुखः सूक्ष्मः सुघोषः सुखदः सुहृत् ।
मनोहरो जितक्रोधो वीरबाहुर्विदारणः ॥ ४९ ॥

(४५५) सुव्रतः जो शुभ व्रत वाले हैं, (४५६) सुमुखः—जो सुन्दर मुख वाले हैं, (४५७) सूक्ष्मः—जो सूक्ष्म हैं, (४५८) सुघोषः—जो सुन्दर स्वर वाले हैं, (४५९) सुखदः जो सुखदाता हैं, (४६०) सुहृत्—जो अहैतुक उपकार करते हैं, (४६१) मनोहरः—जो मन को हर लेते हैं, (४६२) जितक्रोधः—जिन्होंने क्रोध को जीत लिया है, (४६३) वीर बाहुः—जो बलशालिनी भुजाओं वाले हैं, (४६४) विदारणः—जो अधर्मियों को विदीर्ण करते हैं ॥४९॥

स्वापनः स्ववशो व्यापी नैकात्मा नैककर्मकृत् ।
वत्सरो वत्सलो वत्सी रत्नगर्भो धनेश्वरः ॥ ५० ॥

(४६५) स्वापनः—जो अपनी माया द्वारा प्राणियों को आत्मज्ञान रहित कर देते हैं, (४६६) स्ववशः—जो अपने ही वश में रहते हैं, (४६७) व्यापी—जो सर्वत्र व्याप्त हैं, (४६८) नैकात्मा—जो अनेक प्रकार की विभूतियों से युक्त अनेकात्मा हैं, (४६९) नैककर्मकृत्—जो अनेक कर्म करने वाले हैं, (४७०) वत्सरः—जिनमें सब कुछ बसा हुआ है, (४७१) वत्सलः—जो भक्तों पर स्नेह रखते हैं, (४७२) वत्सी—जो वत्स की भांति पालन करते हैं, (४७३) रत्नगर्भः—जिनके गर्भ में रत्न भरे हुए हैं, (४७४) धनेश्वरः—जो सब प्रकार के धनों के स्वामी हैं ॥५०॥

धर्मगुब्धर्मकृद्धर्मी सदसत्क्षरमक्षरम् ।
अविज्ञाता सहस्रांशुर्विधाता कृतलक्षणः ॥ ५१ ॥

(४७५) धर्मगुप्— जो धर्म का संरक्षण करते हैं, (४७६) धर्मकृत्— जो मर्यादा की स्थापना हेतु धर्म करते हैं, (४७७) धर्मीः—जो धर्म को धारण करते हैं, (४७८) सत्—जो सत्य रूप हैं, (४७९) असत्— जो प्रपञ्च रूप असत्य भी हैं, (४८०) क्षरः— जो सर्वभूत होने से क्षरणशील हैं, (४८१) अक्षरः— जो कूटरूप होने के कारण अक्षर (क्षरण-रहित) हैं, (४८२) अविज्ञाता —जिन्हें जाना नहीं जा सकता, (४८३) सहस्रांशु—जो सहस्रों किरणों वाले हैं, (४८४) विधाता— जो समस्त भूतों को धारण किये हैं, (४८५) कृतलक्षण:— जो लक्षणों का निर्माण करते हैं ॥५१॥

गभस्तिनेमिः सत्त्वस्थः सिंहो भूतमहेश्वरः ।
आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृद्गुरुः ॥ ५२ ॥

(४८६) गभस्तनेमिः—जो किरण चक्र में सूर्य रूप से अवस्थित हैं, (४८७) सत्त्वस्थः—जो प्रकाश रूप सत्त्वगुण में मुख्यतः स्थित हैं, (४८८) सिंहः—जो सिंह तुल्य पराक्रमी हैं, (४८९) भूत-महेश्वरः—जो प्राणियों के परम ईश्वर हैं, (४९०) आदिदेव:—जो आदिदेवता हैं, (४९१) महादेव—जो सब से बड़े देवता हैं, (४९२) देवेशः—जो देवताओं के स्वामी हैं. (४९३) देवभृद्गुरु—जो देवताओं का भरण-पोषण करने वाले इन्द्र के भी गुरु हैं ॥५२॥

उत्तरो गोपतिर्गोप्ता ज्ञानगम्यः पुरातनः ।
शरीरभूतभृद्भोक्ता कपीन्द्रो भूरिदक्षिणः ॥ ५३ ॥

(४९४) उत्तरः—जो सब के उत्तर स्वरूप हैं, (४९५) गोपति—जो गायों अथवा इन्द्रियों के पालक (स्वामी) हैं, (४९६) गोप्ता—जो प्राणियों के रक्षक हैं, (४९७) ज्ञानगम्यः—जिन्हें ज्ञान से ही जाना जा सकता है, (४९८) पुरातनः—जो प्राचीनतम हैं, (४९९) शरीरभूतभृत्—जो शारीरिक तत्त्वों के पालक हैं, (५००) भोक्ता—जो उपभोग करने वाले हैं, (५०१) कपीन्द्रः—जो पशुओं के स्वामी हैं, (५०२) भूरिदक्षिणः—जो अनेक दक्षिणाओं वाले हैं ॥५३॥

सोमपोऽमृतपः सोमः पुरुजित्पुरुसत्तमः ।
विनयो जयः सत्यसन्धोदाशार्हः सात्वतां पतिः ॥ ५४ ॥

(५०३) सोमपः—जो सोमपान करने वाले हैं, (५०४) अमृतापः—जो अमृत पान करने वाले हैं, (५०५) सोमः—जो स्वयं सोम स्वरूप हैं, (५०६) पुरुजित्—जो बहुतों को जीतने वाले हैं, (५०७) पुरुसत्तमः—जो पुरुषों में श्रेष्ठ हैं, (५०८) विनयः—जो नियमन करने वाले हैं, (५०९) जो विजय करने वाले हैं, (५१०) सत्यसन्धः—जो सत्य संकल्प वाले हैं, (५११) दाशार्हः—जिन्होंने दशार्ह-कुल में जन्म लिया है, (५१२) सात्वतांपतिः—जो सात्वत अर्थात् वैष्णवों के स्वामी हैं ॥५४॥

जीवो विनयिता साक्षी मुकुन्दोऽमितविक्रमः।
अम्भोनिधिरनन्तात्मा महोदधिशयोऽन्तकः ॥ ५५ ॥

(५१३) जीवः—जो जीव स्वरूप हैं, (५१४) विनयितासाक्षी—जो प्राणियों की गति (क्रिया-कलाप) के साक्षी हैं, (५१५) मुकुन्दः—जो मुक्तिदायक हैं, (५१६) अमित विक्रमः—जो अत्यन्त पराक्रमी हैं, (५१७) अम्भोनिधिः—जो सागर रूपी विभूति वाले हैं, (५१८) अनन्तात्मा—जो देश, कालादि से परे अनन्त आत्मा हैं, (५१९) महोदधिशयः—जो प्रलयोपरान्त महासमुद्र में शयन करते हैं, (५२०) अन्तकः—जो प्राणियों का अन्त करते हैं ॥५५॥

अजो महार्हः स्वाभाव्यो जितामित्रः प्रमोदनः।
आनन्दोनन्दनो नन्दः सत्यधर्मा त्रिविक्रमः ॥ ५६ ॥

(५२१) अजः—जो अजन्मा हैं, (५२२) महार्हः—जो पूजा योग्य हैं, (५२३) स्वाभाव्यः—जो स्वयं उत्पन्न होते हैं, (५२४) जितामित्रः—जो राग द्वेषादि को जीत लेने वाले मित्र स्वरूप हैं, (५२५) प्रमोदनः—जो प्रमुदित करने वाले हैं, (५२६) आनन्दः—जो आनन्द स्वरूप हैं, (५२७) नन्दनः—जो आनन्दित करने वाले हैं, (५२८) नन्दः—जो प्रसन्नतादायक हैं, (५२९) सत्यधर्मा—जो सत्य धर्म के पालक हैं, (५३०) त्रिविक्रमः—जिन्होंने तीन पांव में ही तीनों लोकों को नाप लिया था ॥५६॥

महर्षिः कपिलाचार्यः कृतज्ञो मेदिनीपतिः ।
त्रिपदस्त्रिदशाध्यक्षो महाशृङ्गः कृतान्तकृत् ॥ ५७ ॥

(५३१) महर्षि कपिलाचार्य—जो सांख्य शास्त्र के ज्ञाता कपिल महर्षि हैं, (५३२) कृतज्ञः—जो कृतज्ञ हैं, (५३३) मेदिनीपतिः—जो पृथ्वी के स्वामी हैं, (५३४) त्रिपदः—जो तीन पगों वाले हैं, (५३५) त्रिदशाध्यक्षः—जो तीनों अवस्थाओं के स्वामी हैं, (५३६) महाशृङ्गः—जो मत्स्यावतार के समय बड़े सींग वाले हैं, (५३७) कृतान्तकृत्—जो कार्यरूप जगत् का अन्त करने वाले हैं ॥५७॥

महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी ।
गुह्यो गभीरो गहनो गुप्तश्चक्रगदाधरः ॥ ५८ ॥

(५३८) महावराहः—जिन्होंने महावराह का रूप धारण किया है, (५३९) गोविन्द—जिन्हें इन्द्रियों द्वारा अनुभव किया जा सकता है, (५४०) सुषेणः—जो सुन्दर सेना वाले हैं, (५४१) कनकाङ्गदी—जो स्वर्ण का अंगद (बाजूबन्द) धारण करते हैं, (५४२) गुह्यः—जो गुप्त स्वरूप हैं, (५४३) गभीरः—जो गंभीर स्वभाव के हैं, (५४४) गहनः—जो कठिन हैं, (५४५) गुप्तः—जिन तक किसी की पहुंच नहीं हो पाती, (५४६) चक्रगदाधरः—जो सुदर्शनचक्र तथा गदा को धारण करने वाले हैं ॥५८॥

वेधाःस्वाङ्गोऽजितःकृष्णो दृढः संकर्षणोऽच्युतः ।
वरुणो वारुणो वृक्षः पुष्कराक्षो महामनाः ॥ ५९ ॥

(५४७) वेधाः—जो विधान करने वाले हैं, (५४८) स्वाङ्गः—जो कार्य हेतु स्वयं ही अङ्ग बन जाते हैं, (५४९) अजितः—जिन्हें कोई जीत नहीं सकता, (५५०) कृष्णः—जो कृष्ण वर्ण हैं अथवा कृष्णद्वैपायन व्याप्त स्वरूप हैं, (५५१) दृढ़ः—जो दृढ़ स्वरूप वाले हैं, (५५२) संकर्षणोऽच्युतः—जो संहार के समय सब का आकर्षण करते हुए भी स्वयं नहीं गिरते, (५५३) वरुणः—जो वरुण स्वरूप हैं, (५५४) वारुणः—जो वशिष्ठ रूप में वरुण के पुत्र भी हैं, (५५५) वृक्षः—जो वृक्ष की भांति अविचल हैं, (५५६) पुष्कराक्षः—जो पुष्कर-पत्र की भांति नेत्रों वाले हैं, (५५७) महामनः—जो महान् मनस्वी हैं ॥५९॥

भगवान् भगहानन्दी वनमाली हलायुधः ।
आदित्यो ज्योतिरादित्यः सहिष्णुर्गतिसत्तमः ॥ ६० ॥

(५५८) भगवान्—जो सर्वोपरि हैं, (५५९) भगहा—जो प्रलय काल में विनाश करते हैं, (५६०) आनन्दी—जो आनन्द स्वरूप हैं, (५६१) वनमाली—जो वनमाला धारण करते हैं, (५६२) हलायुधः—जो बलराम रूप में हल को आयुध की भाँति धारण करते हैं (५६३) आदित्यः—जो अदिति के पुत्र के रूप में भी जन्मे हैं, (५६४) ज्योतिरादित्यः—जो सूर्य मण्डल में ज्योति रूप से उपस्थित हैं, (५६५) सहिष्णुः—जो सहनशील हैं, (५६६) गतिसत्तमः—जो श्रेष्ठ गति हैं ॥६०॥

सुधन्वा खण्डपरशुर्दारुणो द्रविणप्रदः ।
दिवस्पृक्सर्वदृग्व्यासो वाचस्पतिरयोनिजः ॥ ६१ ॥

(५६७) सुधन्वा—जो सुन्दर धनुष धारण करते हैं, (५६८) खण्ड परशुः—जो परशुराम रूप में परशु द्वारा शत्रुओं का खण्डन करते हैं, (५६९) दारुणः—जो कठिन हैं, (५७०) द्रविणप्रदः—जो भक्तों को आकांक्षानुसार धन देते हैं, (५७१) दिविस्पृक्—जो स्वर्ग का स्पर्श किये हुए हैं, (५७२) सर्वदृग्व्याप्तः—जो सब कुछ देखने वाले व्याप्त स्वरूप हैं, (५७३) वाचस्पतिरयोनिधः जो विधा के स्वामी होते हुए भी अजन्मा हैं ॥६१॥

त्रिसामा सामगः साम निर्वाणं भेषजं भिषक् ।
संन्यासकृच्छमः शान्तोनिष्ठाशान्तिः परायणः ॥ ६२ ॥

(५७४) त्रिसामा—जो तीनों प्रकार के साम गायकों द्वारा स्तुत्य हैं, (५७५) सामगः—जो सामवेद के गायक हैं, (५७६) सामः—जो स्वयं सामवेद रूप भी हैं, (५७७) निर्वाणम्—जो निर्वाण देने वाले हैं, (५७८) भेषजम्—जो संसार-रोग की औषधरूप हैं, (५७९) भिषक्—जो औषध दाता हैं, (५८०) सन्यास कृत् जो सन्यास देने वाले हैं, (५८१) शमः—जो इन्द्रिय निग्रही हैं, (५८२) शान्ताः—जो शान्त स्वरूप हैं, (५८३) निष्ठा—जिनमें सभी निवास करते हैं, (५८४) शान्तिः—जो शान्ति स्वरूप हैं, (५८५) परायणम्—जो पुनरावृत्ति-रहित हैं ॥६२॥

शुभाङ्गः शान्तिदः स्रष्टा कुमुदः कुवलेशयः ।
गोहितो गोपतिर्गोप्ता वृषभाक्षो वृषप्रियः ॥ ६३ ॥

(५८६) शुभाङ्गः—जो सुन्दर अङ्गों वाले हैं, (५८७) शान्तिदः—जो शान्ति देने वाले हैं, (५८८)

स्रष्टा—जो सृष्टि करने वाले हैं, (५८९) कुमुदः—जो मुदित बने रहते हैं, (५९०) कुवलयेशः—जो शेष शय्या पर शयन करते हैं। (५९१) गोहितः—जो गायों के हितकारी हैं, (५९२) गोपतिः—जो गायों के स्वामी हैं, (५९३) गोप्ता—जो माया से ढक लेने वाले हैं, (५९४) वृषभाक्षः—जो बैल जैसी आँखों वाले हैं, (५९५) वृषप्रियः—जिन्हें धर्मरूपी बैल प्रिय है ॥६३॥

अनिवर्ती निवृत्तात्मा संक्षेप्ता क्षेमकृच्छिवः ।
श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः ॥ ६४ ॥

(२९६) अनिवर्त्ती—जो धर्म से विमुख नहीं होते, (५९७) निवृत्तात्मा—जो विषयों से निवृत्त आत्मा वाले हैं, (५९८) संक्षेप्ता—जो संक्षिप्त कर देने वाले हैं, (५९९) क्षेमकृत—जो कल्याण करने वाले हैं, (६००) शिवः—जो कल्याणप्रद हैं, (६०१) श्रीवत्सवक्षाः—जिनके वक्षस्थल पर श्रीवत्स चिन्ह है, (६०२) श्रीवासः—जिनके हृदय में लक्ष्मी का निवास है, (६०३) श्रीपतिः—जो लक्ष्मी के पति हैं, (६०४) श्रीमतांवरः—जो धनिकों में श्रेष्ठ हैं ॥६४॥

श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः ।
श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाँल्लोकत्रयाश्रयः ॥ ६५ ॥

(६०५) श्रीदः—जो लक्ष्मीदायक हैं, (६०६) श्रीशः—जो लक्ष्मी के स्वामी हैं, (६०७) श्रीनिवासः—जो लक्ष्मी के हृदय में निवास करते हैं, (६०८) श्रीनिधिः—जो लक्ष्मी-सागर हैं, (६०९) श्री विभावनः—जो लक्ष्मी प्रदान करने वाले हैं, (६१०) श्रीधरः—जो लक्ष्मी को धारण करते हैं, (६११) श्रीकरः—जो

लक्ष्मीयुक्त करने वाले हैं, (६१२) श्रेयः—जो कल्याण रूप हैं, (६१३) श्रीमान्—जो लक्ष्मीवान् हैं, (६१४) लोकत्रयाश्रयः—जो तीनों लोकों के आश्रय स्वरूप हैं ॥६५॥

स्वक्षः स्वङ्गः शतानन्दो नन्दिर्ज्योतिर्गणेश्वरः ।
विजितात्मा विधेयात्मा सत्कीर्तिश्छिन्नसंशयः ॥ ६६ ॥

(६१५) स्वक्षः—जो सुन्दर आंखों वाले हैं, (६१६) स्वङ्गः—जो सुन्दर अङ्गों वाले हैं, (६१७) शतानन्दः—जो सैकड़ों प्रकार के आनन्द देने वाले हैं, (६१८) नन्दिः—जो आनन्दप्रद हैं, (६१९) ज्योतिर्गणेश्वरः—जो ज्योतिर्गण (नक्षत्रों) के स्वामी हैं, (६२०) विजितात्मा—जिन्होंने आत्मा पर भी विजय पा ली है, (६२१) विधेयात्मा—जो आत्मा के विधेयक हैं, (६२२) सत्कीर्त्तिः—जो श्रेष्ठ कीर्ति वाले हैं, (६२३) छिन्न संशयः—जो संशय रहित हैं ॥६६॥

उदीर्णः सर्वतश्चक्षुरनीशः शाश्वतः स्थिरः ।
भूशयो भूषणो भूतिर्विशोकः शोकनाशनः ॥ ६७ ॥

(६२४) उदीर्णः—जो सर्वोत्कृष्ट होने के कारण उदीर्ण हैं, (६२५) सर्वतश्चक्षुः—जो चैतन्य रूप से सबको देखते हैं, (६२६) अनीशः—जिनका कोई स्वामी नहीं है, (६२७) शाश्वतस्थिरः—जो शाश्वत रूप से स्थिर हैं, (६२८) भूशयः—जिन्होंने भूमि पर शयन किया है, (६२९) भूषणः—जो विश्व के आभूषण हैं, (६३०) भूतिः—जो विभूति स्वरूप हैं, (६३१) विशोकः—जिन्हें कोई शोक नहीं है, (६३२) शोक नाशनः—जो शोक को नष्ट करने वाले हैं ॥६७॥

अर्चिष्मानर्चितः कुम्भो विशुद्धात्मा विशोधनः ।
अनिरुद्धोऽप्रतिरथः प्रद्युम्नोऽमितविक्रमः ॥ ६८ ॥

(६३३) अर्चिष्मान्—जो किरणों वाले हैं, (६३४) अर्चितः—जो सब लोकों द्वारा अर्चित हैं, (६३५) कुम्भः—जो घट रूप हैं, (६३६) विशुद्धात्मा—जो विशुद्ध आत्मा वाले हैं, (६३७) विशोधनः—जो शुद्ध करने वाले हैं, (६३८) अनिरुद्धः—जिन्हें अवरुद्ध किया (रोका) नहीं जा सकता, (६३९) अप्रतिरथः—जिनका कोई प्रतिपक्षी नहीं है, (६४०) प्रद्युम्नः—जो प्रकृष्ट धन वाले हैं, (६४१) अमितविक्रमः—जो अपार विक्रम वाले हैं ॥६८॥

कालनेमिनिहा वीरः शौरिः शूरजनेश्वरः ।
त्रिलोकात्मा त्रिलोकेशः केशवः केशिहा हरिः ॥६९ ॥

(६४२) कालनेमिहा—जिन्होंने कालनेमि को मारा था, (६४३) वीरः—जो वीर हैं, (६४४) शौरिः—जो शूरों के कुल में उत्पन्न हुए हैं, (६४५) शूरजनेश्वरः—जो शूर-वीरों पर शासन करते हैं; (६४६) त्रिलोकात्मा—जो तीनों लोकों की आत्मा हैं, (६४७) त्रिलोकेशः—जो तीनों लोकों के स्वामी हैं, (६४८) केशवः—जो किरणों से युक्त हैं, (६४९) केशिहा—जिन्होंने 'केशी' नामक राक्षस का वध किया है, (६५०) हरिः—जो अविद्या को हर लेते हैं ॥६९॥

कामदेवः कामपालः कामी कान्तः कृतागमः ।
अनिर्देश्यवपुर्विष्णुर्वीरोऽनन्तो धनञ्जयः ॥ ७० ॥

(६५१) कामदेवः—जो कामनाओं को देने वाले हैं, (६५२) कामपालः—जो कामनाओं का पालन करते हैं, (६५३) कामी—जो पूर्ण काम हैं, (६५४) कान्तः—जो ब्रह्मा का भी अन्त करने वाले हैं, (६५५) कृतागमः—जो आश्रम आदि शास्त्रों का निर्माण करते हैं, (६५६) अनिर्देश्यवपुः—जो गुणातीत होने के कारण निर्देशित नहीं किये जा सकते, (६५७) विष्णुः—जो विशेष कान्तिमान् हैं, (६५८) वीरः—जो गतिवान् (वीर) हैं, (६५९) अनन्तः—जिनका अन्त नहीं हैं, (६६०) धनंजयः—जो धन को जीतने वाले अर्जुन के संरक्षक हैं ।।७०।।

ब्रह्मण्यो ब्रह्मकृद्ब्रह्मा ब्रह्म ब्रह्मविवर्धनः ।
ब्रह्मविद्ब्राह्मणो ब्रह्मी ब्रह्मज्ञो ब्राह्मणप्रियः ॥ ७१ ॥

(६६१) ब्रह्मण्यः—जो ब्राह्मणों के सेवक हैं, (६६२) ब्रह्मकृत्—जो ब्रह्मा द्वारा स्तुति किए गए हैं, (६६३) ब्रह्मा—जो सृष्टिकर्त्ता हैं, (६६४) ब्रह्म—जो सबसे बड़े हैं, (६६५) ब्रह्मविवर्धनः—जो ब्रह्म (तप आदि अथवा ब्रह्म) की वृद्धि करने वाले हैं, (६६६) ब्रह्मवित्—जो ब्रह्म के ज्ञाता हैं, (६६७) ब्राह्मणः जो ब्रह्मज्ञ ब्राह्मणों के स्वरूप हैं, (६६८) ब्रह्मी—जो ब्रह्म स्वरूप ही हैं, (६६९) ब्रह्मज्ञः—जो ब्रह्म को जानते हैं, (६७०) ब्राह्मणप्रियः—जिन्हें ब्राह्मण प्रिय हैं ।।७१।।

महाक्रमो महाकर्मा महातेजा महोरगः ।
महाक्रतुर्महायज्वा महायज्ञो महाहविः ॥ ७२ ॥

(६७१) महाक्रमः—जो महान् क्रम वाले हैं, (६७२) महाकर्मा—जो महान् कर्मों वाले हैं, (६७३)

महातेजा—जो महान् तेजस्वी हैं, (६७४) महोरगः—जो महासर्प (शेष, वासुकि आदि के रूप में) हैं, (६७५) महाक्रतुः—जो महान् 'क्रतु' रूप हैं, (६७६) महायज्वा—जो महान् यज्ञकर्त्ता हैं, (६७७) महायज्ञः—जो महान् यज्ञ रूप हैं, (६७८) महाहविः—जो महान् 'हवि' रूप हैं ॥७२॥

स्तव्यः स्तवप्रियः स्तोत्रं स्तुतिः स्तोता रणप्रियः ।
पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्यकीर्तिरनामयः ॥ ७३ ॥

(६७९) स्तव्यः—जो सबके द्वारा स्तुति किये जाते हैं, (६८०) स्तवप्रियः—जिन्हें स्तुति प्रिय है, (६८१) स्तोत्रम्—जो स्वयं 'स्तोत्र' रूप हैं, (६८२) स्तुतिः—जो 'स्तुति' रूप भी हैं, (६८३) स्तोता—जो स्वयं ही स्तुति करने वाले हैं, (६८४) रणप्रियः जो युद्ध-प्रिय हैं (६८५) पूर्णः—जो समस्त कामनाओं से परिपूर्ण हैं, (६८६) पूरयिता—जो पूर्ण करने वाले हैं, (६८७) पुण्यः—जो पुण्य स्वरूप हैं, (६८८) पुण्यकीर्त्तिः—जिनकी कीर्त्ति पुण्यमय है, (६८९) अनामयः—जो व्याधि-रहित हैं ॥७३॥

मनोजवस्तीर्थकरो वसुरेता वसुप्रदः ।
वसुप्रदो वासुदेवो वसुर्वसुमना हविः ॥ ७४॥

(६९०) मनोजवः—जो मन के वेग जैसे हैं, (६९१) तीर्थंकरः जो तीर्थों के कर्त्ता हैं, (६९२) वसुरेताः—जो सुवर्ण-वीर्य हैं, (६९३) वसुप्रदः—जो स्वर्णप्रदाता हैं, (६९४) वसुप्रदो—जो वसुओं को देते हैं अथवा मोक्ष-दायक हैं, (६९५) वासुदेवः—जो वसुदेव के पुत्र हैं, (६९६) वसुः—जो 'वसु' स्वरूप हैं, (६९७) वसुमनाः—जो सबमें सामान्यभाव से निवास करते हैं, (६९८) हविः—जो हवि स्वरूप हैं ॥७४॥

सद्गतिः सत्कृतिः सत्ता सद्भूतिः सत्परायणः ।
शूरसेनो यदुश्रेष्ठः सन्निवासः सुयामुनः ॥ ७५ ॥

(६९९) सद्गतिः – जो उत्तम गति हैं, (७००) सत्कृतिः— जो श्रेष्ठ कृति हैं, (७०१) सत्ता—जो तत्स्वरूप सत्तात्मक हैं, (७०२) सद्भूतिः—जो पवित्र विभूति हैं, (७०३) सत्यपरायणः—जो सत्पथ पर चलने वाले हैं, (७०४) शूरसेनः— जो वीरों की सेना से युक्त हैं, (७०५) यदुश्रेष्ठः—जो यदुवंशियों में श्रेष्ठ हैं, (७०६) सन्निवासः—जो सज्जनों के आश्रय हैं, (७०७) सुयामुनः—जो यमुना से सम्बन्धित हैं ॥७५॥

भूतावासो वासुदेवः सर्वासुनिलयोऽनलः ।
दर्पहा दर्पदो दृप्तो दुर्धरोऽथापराजितः ॥ ७६ ॥

(७०८) भूतावासः – जो सभी प्राणियों के आश्रय हैं, (७०९) वासुदेवः— जो वसुदेव के पुत्र हैं, (७१०) सर्वासुनिलयः—जो सबके निलय (घर) हैं, (७११) अनलः – जो अग्निरूप तेजस्वी हैं, (७१२) दर्पहा – जो घमण्ड को नष्ट करने वाले हैं, (७१३) दर्पदः – जो धर्ममार्ग पर चलने का दर्प देते हैं, (७१४) दृप्तः – जो दीप्तिमान् हैं, (७१५) दुर्धरः – जिन्हें धारण करना कठिन है, (७१६) अपराजितः – जिन्हें पराजित नहीं किया जा सकता ॥७६॥

विश्वमूर्तिर्महामूर्तिर्दीप्तमूर्तिरमूर्तिमान् ।
अनेकमूर्तिरव्यक्तः शतमूर्तिः शताननः ॥ ७७ ॥

(७१७) विश्वमूर्त्ति—सम्पूर्ण विश्व ही जिनकी मूर्त्ति है, (७१८) महामूर्त्ति—जो महान् मूर्ति वाले हैं, (७१९) दीप्तमूर्त्तिः—जो प्रदीप्त मूर्त्ति वाले हैं। (७२०) अमूर्त्तिमान्:—जो मूर्त्तिजन्य नहीं हैं, (७२१) अनेक मूर्त्तिः—जो अनेक रूपों वाले हैं, (७२२) अव्यक्तः—जो व्यक्त नहीं होते, (७२३) शतमूर्त्तिः—जो सैकड़ों रूपों वाले हैं, (७२४) शताननः—जो सैकड़ों मुख वाले हैं ॥७७॥

एको नैकः सवः कः किं यत्तत्पदमनुत्तमम् ।
लोकबन्धुर्लोकनाथो माधवो भक्तवत्सलः ॥ ७८ ॥

(७२५) एकः—जो एकमात्र हैं, (७२६) नैकः—जो अनेक रूपधारी हैं, (७२७) सवः—जो सर्व स्वरूप हैं, (७२८) कः—जो सुख स्वरूप हैं, (७२९) किम्—जो ब्रह्म विचार के योग्य हैं, (७३०) यत्—जो ब्रह्म-निर्देशक हैं, (७३१) तत्—जो ब्रह्म-विस्तार हैं, (७३२) पदमनुत्तमम्—जो उत्तम 'पद' रूप हैं, (७३३) लोकबन्धुः—जो तीनों लोकों के मित्र हैं, (७३४) लोकनाथः—जो तीनों लोकों के स्वामी हैं, (७३५) माधवः—जो मधुवंश में उत्पन्न हुए अथवा जिन्होंने 'मधु' नामक दैत्य का संहार किया है, (७३६) भक्तवत्सलः—जो भक्तों के प्रति स्नेहयुक्त हैं ॥७८॥

सुवर्णवर्णो हेमाङ्गो वराङ्गश्चन्दनाङ्गदी ।
वीरहा विषमः शून्यो घृताशीरचलश्चलः ॥ ७९ ॥

(७३७) सुवर्ण वर्णः—जो स्वर्ण जैसे वर्ण वाले हैं, (७३८) हेमाङ्गः—जिनके अङ्ग सोने जैसी कान्ति के हैं, (७३९) वराङ्गः—जो सुन्दर अङ्गों वाले हैं, (७४०) चन्दनाङ्गदीः—जो चन्दन तथा भुजबन्ध धारण

करते वाले हैं, (७४१) वीरहा—जो धर्मरक्षार्थं बलशाली राक्षसों का संहार करने वाले हैं; (७४२) विषमः—जिनके समतुल्य कोई नहीं हैं, (७४३) शून्यः—जो सब प्रपंचों से रहित हैं, (७४४) घृताशीः—जो प्रार्थना विगलित हैं, (७४५) अचलः—जो चलायमान नहीं होते, (७४६) चलः—जो वायुरूप से चलायमान भी हैं ॥७९॥

अमानी मानदो मान्यो लोकस्वामी त्रिलोकधृक् ।
सुमेधा मेधजो धन्यः सत्यमेधा धराधरः ॥ ८० ॥

(७४७) अमानी—जो मान नहीं करते, (७४८) मानदः—जो मान देने वाले हैं, (७४९) मान्यः—जो माननीय हैं, (७५०) लोक स्वामी—जो तीनों लोकों के स्वामी हैं, (७५१) त्रिलोक् धृक्—जो तीनों लोकों को धारण किए हैं, (७५२) सुमेधाः—जो श्रेष्ठ प्रज्ञावान् हैं, (७५३) मेधजः—जो यज्ञ से उत्पन्न होने वाले यज्ञ पुरुष हैं, (७५४) धन्यः—जो धन्य हैं, (७५५) सत्यमेधाः—जो सच्ची मेधा वाले हैं, (७५६) धराधरः—जो पृथ्वी को धारण करते हैं ॥८०॥

तेजोवृषो द्युतिधरः सर्वशस्त्रभृतां वरः ।
प्रग्रहो निग्रहो व्यग्रो नैकशृङ्गो गदाग्रजः ॥ ८१ ॥

(७५७) तेजोवृषः—जो तेज की वर्षा करते हैं, (७५८) द्युतिधरः—जो कान्ति को धारण करते हैं, (७५९) सर्वशस्त्र-भृतांवरः—जो सब शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ हैं, (७६०) प्रग्रहः—जो इन्द्रियरूपी घोड़ों को नियन्त्रित रखते हैं, (७६१) निग्रहः—जो सबका निग्रह करते हैं, (७६२) व्यग्रः—जो प्रमादि हैं अथवा

भक्तों के लिए चिन्तित बने रहते हैं, (७६३) नैकशृङ्गः—जो शब्द ब्रह्म के चतुःशृङ्ग हैं, (७६४) गदाग्रजः—जो निगदमन्त्र द्वारा प्रकट होते हैं ॥८१॥

चतुर्मूर्तिश्चतुर्बाहुश्चतुर्व्यूहश्चतुर्गतिः ।
चतुरात्मा चतुर्भावश्चतुर्वेदविदेकपात् ॥ ८२ ॥

(७६५) चतुर्मूर्त्तिः—जो चार प्रकार की मूर्त्तियों (स्वरूपों) वाले हैं, (७६६) चतुर्बाहुः—जो चार भुजाओं वाले हैं, (७६७) चतुर्व्यूहः—जो चार व्यूहों वाले हैं, (७६८) चतुर्गतिः—जो चार गतियों वाले हैं, (७६९) चतुरात्मा—जो मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार इन चार अन्तःकरणों वाले हैं, (७७०) चतुर्भावः—जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, इन चार भावों वाले हैं, (७७१) चतुर्वेदवित्—जो चारों वेदों को जानने वाले हैं, (७७२) एकपात्—जो एक ही पाद से स्थित हैं ॥८२॥

समावर्तो निवृत्तात्मा दुर्जयो दुरतिक्रमः ।
दुर्लभो दुर्गमो दुर्गो दुरावासो दुरारिहा ॥ ८३ ॥

(७७३) समावर्तः—जो संसार-चक्र को घुमाने वाले हैं, (७७४) निवृत्तात्मा—जिनकी आत्मा विषयों से निवृत्त है, (७७५) दुर्जयः—जिन्हें जीता नहीं जा सकता, (७७६) दुरतिक्रमः—जिनकी आज्ञा का कोई अतिक्रमण नहीं कर पाता, (७७७) दुर्लभः—जो कठिनाई से मिल पाते हैं, (७७८) दुर्गमः—जो कठिनाई से जाने जाते हैं, (७७९) दुर्गः—जिन तक पहुँच पाना कठिन है, (७८०) दुरावासः—जिनको हृदय में बसा पाना कठिन है, (७८१) दुरारिहा—जो दुष्ट शत्रुओं का नाश करने वाले हैं ॥८३॥

शुभाङ्गो लोकसारङ्गः सुतन्तुस्तन्तुवर्धनः ।
इन्द्रकर्मा महाकर्मा कृतकर्मा कृतागमः ॥ ८४ ॥

(७८२) शुभाङ्गः—जो सुन्दर अङ्गों वाले हैं, (७८३) लोकसारङ्गः—जो संसाररूपी वन के मयूर रूप हैं, (७८४) सुतन्तुः—जो सुन्दर तन्तु वाले हैं, (७८५) तन्तुवर्धनः—जो तन्तु की वृद्धि करने वाले हैं, (७८६) इन्द्रकर्मा—जो इन्द्र की भाँति कर्म करते हैं, (७८७) महाकर्मा—जो महान् कर्म करने वाले हैं, (७८८) कृतकर्मा:—जिन्हें कोई कर्म नहीं करना पड़ता, (७८९) कृतागमः—जिन्होंने आगम (वेद) का निर्माण किया है ॥८४॥

उद्भवः सुन्दरः सुन्दो रत्ननाभः सुलोचनः ।
अर्को वाजसनः शृङ्गी जयन्तः सर्वविज्जयी ॥ ८५ ॥

(७९०) उद्भवः—जो स्वेच्छा से उत्पन्न होते हैं, (७९१) सुन्दरः—जो सुन्दर हैं, (७९२) सुन्दः—जो शुभदायक हैं, (७९३) रत्ननाभः—जिनकी नाभि रत्न के समान सुन्दर है (७९४) सुलोचनः—जो सुन्दर नेत्रों वाले हैं, (७९५) अर्कः—जो पूजनीय हैं, (७९६) वाजसनः—जो याचकों को अन्न देने वाले हैं, (७९७) शृङ्गी—जो मत्यरूप में सींग धारण करने वाले हैं, (७९८) जयन्तः—जो शत्रुजयी हैं, (७९९) सर्वविज्जयीः—जो सबको जीतने वाले हैं ॥८५॥

सुवर्णबिन्दुरक्षोभ्यः सर्ववागीश्वरेश्वरः ।
महाह्रदो महागर्तो महाभूतो महानिधिः ॥ ८६ ॥

(८००) सुवर्णविन्दुः—जो स्वर्ण-विन्दु जैसे हैं, (८०१) अक्षोभ्यः—जो कभी क्षुब्ध नहीं होते, (८०२) सर्ववागीश्वरेश्वरः—जो समस्त वागीश्वरों के स्वामी हैं, (८०३) महाह्रदः—जो आनन्दरूपी महाह्रद हैं, (८०४) महागर्त्तः—जिनकी माया महागर्त्त के समान हैं, (८०५) महाभूतः—जो महान् प्राणी हैं, (८०६) महानिधिः—जो महान् निधि स्वरूप हैं ।।८६।।

कुमुदः कुन्दरः कुन्दः पर्जन्यः पावनोऽनिलः ।
अमृतांशोऽमृतवपुः सर्वज्ञः सर्वतोमुखः ॥ ८७ ॥

(८०७) कुमुदः—जो कुमद स्वरूप हैं, (८०८) कुन्दरः—जो कुन्द के समान सुन्दर फलदाता हैं, (८०९) कुन्दः—जो कुन्द के समान सुन्दर अङ्गों वाले हैं, (८१०) पर्जन्यः—जो मेघों की भाँति शान्ति-दायक हैं, (८११) पावनः—जो पवित्र हैं. (८१२) अनिलः—जो प्रेरणाप्रद हैं, (८१३) अमृतांशः—जो अमृत का उपयोग करते हैं, (८१४) अमृतवपुः—जो अमृत शरीर वाले हैं, (८१५) सर्वज्ञः—जो सब कुछ जानते हैं, (८१६) सर्वतोमुखः—जिनका मुख सब ओर है ।।८७।।

सुलभः सुव्रतः सिद्धः शत्रुजिच्छत्रुतापनः ।
न्यग्रोधोदुम्बरोऽश्वत्थश्चाणूरान्ध्रनिषूदनः ॥ ८८ ॥

(८१७) सुलभः—जो सुलभ हैं, (८१८) सुव्रतः—जो श्रेष्ठ व्रत वाले हैं, (८१९) सिद्धः—जो स्वयं सिद्ध हैं, (८२०) शत्रुजित्—जो शत्रुओं को जीतने वाले हैं, (८२१) शत्रुतापनः—जो शत्रुओं को पीड़ित करते हैं, (८२२) न्यग्रोधः—जो सबके मूल में निवास करते हैं, (८२३) उदुम्बरः—जो आकाश से भी

ऊँचे हैं, (८२४) अश्वत्थः—जो अश्वत्थ वृक्ष के समान हैं, (८२५) चाणूरान्ध्रनिषूदनः—जिन्होंने चाणूर नामक अन्ध्रजाति के योद्धा को मारा है ॥८८॥

सहस्रार्चिः सप्तजिह्वः सप्तैधाः सप्तवाहनः ।
अमूर्त्तिरनघोऽचिन्त्यो भयकृद्भयनाशनः ॥ ८९ ॥

(८२६) सहस्रार्चिः—जो सहस्रों किरणों वाले हैं, (८२७) सप्तजिह्वः—जो सात जिह्वाओं वाले हैं, (८२८) सप्तैधाः—जो सात दीप्तियों वाले हैं, (८२९) सप्तवाहनः—जो सात वाहनों वाले हैं, (८३०) अमूर्त्तिः—जिनकी कोई मूर्त्ति नहीं हैं, (८३१) अनघः—जो पाप-रहित हैं, (८३२) अचिन्त्यः—जो चिन्तन से परे हैं, (८३३) भयकृत्—जो कुमार्गियों के लिए भयकारक हैं, (८३४) भयनाशनः—जो भय नष्ट करने वाले हैं ॥८९॥

अणुर्बृहत्कृशः स्थूलो गुणभृन्निर्गुणो महान् ।
अधृतः स्वधृतः स्वास्यः प्राग्वंशो वंशवर्धनः ॥ ९० ॥

(८३५) अणुः—जो अणु स्वरूप हैं, (८३६) बृहत्—जो बड़े हैं, (८३७) कृशः—जो कृश स्वरूप हैं, (८३८) स्थूलः—जो स्थूलरूप वाले हैं, (८३९) गुणभृत्—जो तीनों गुणों के अधिष्ठान हैं; (८४०) निर्गुणः—जो सब गुणों से रहित हैं, (८४१) महान्—जो महान् हैं, (८४२) अधृतः—जिन्हें किसी ने धारण नहीं कर रखा है, (८४३) स्वधृतः—जो स्वयं ही अपने को धारण किए हुए हैं, (८४४) स्वास्यः—जो स्वयं उपदेशक हैं, (८४५) प्राग्वंशः—जो किसी वंश से प्रथम उत्पन्न हुए हैं, (८४६) वंशवर्धनः—जो वंश की वृद्धि करने वाले हैं ॥९०॥

भारभृत्कथितो योगी योगीशः सर्वकामदः।
आश्रमः श्रमणः क्षामः सुपर्णो वायुवाहनः ॥ ९१ ॥

(८४७) भारभृत्—जो संसार के भार को धारण किए हैं, (८४८) कथितः—जो वेदों द्वारा कथित (वर्णित) हैं, (८४९) योगी—जो योगाभ्यासी हैं, (८५०) योगीशः—जो योगियों के स्वामी हैं, (८५१) सर्वकामदः—जो समस्त कामनाओं को देने वाले हैं,(८५२) आश्रमः—जो सबके आश्रय स्वरूप हैं, (८५३) श्रमणः—जो भ्रमण करने वाले तथा अविवेकियों को उपदेश करने वाले हैं, (८५४) क्षामः—जो दुष्टों को क्षीण करने वाले हैं, (८५५) सुपर्णः—जो संसाररूपी वृक्ष के सुन्दर पत्ते जैसे हैं, (८५६) वायुवाहनः—जो वायु को वहन करते हैं ॥९१॥

धनुर्धरो धनुर्वेदो दण्डो दमयिता दमः।
अपराजितः सर्वसहो नियन्ताऽनियमोऽयमः ॥ ९२ ॥

(८५७) धनुर्धरः—जो धनुषधारी हैं, (८५८) धनुर्वेदः—जो धनुष-विद्या को जानते हैं, (८५९) दण्डः—जो दण्ड देने वाले हैं, (८६०) दमयिता—जो दमन करने वाले हैं, (८६१) दमः—जो दण्ड स्वरूप हैं, (८६२) अपराजितः—जो कभी पराजित नहीं होते, (८६३) सर्वसहः—जो सबको सहन कर सकते हैं, (८६४) नियन्ता—जो लोकपालों की नियुक्ति करते हैं, (८६५) अनियमः—जो नियमों से परे हैं, (८६६) अयमः—जिनकी मृत्यु नहीं है ॥९२॥

सत्त्ववान् सात्त्विकः सत्यः सत्यधर्मपरायणः ।
अभिप्रायः प्रियार्होऽर्हः प्रियकृत्प्रीतिवर्धनः ॥ १३ ॥

(८६७) सत्त्ववान् – जो सत्त्व वाले हैं, (८६८) सात्त्विकः—जो सतोगुण प्रधान हैं, (८६९) सत्यः—जो सत्यस्वरूप हैं, (८७०) सत्यधर्म परायणः—जो सत्य एवं धर्म में स्थित रहते हैं, (८७१) अभिप्रायः—जो भक्तजनों के अभिप्राय रूप हैं, (८७२) प्रियार्हः—जो इष्ट-निवेदन करने योग्य हैं, (८७३) अर्हः—जो पूजनीय हैं, (८७४) प्रियकृत्—जो प्रिय करने वाले हैं, प्रीतिवर्धनः—जो प्रीति बढ़ाने वाले हैं ॥१३॥

विहायसगतिर्ज्योतिः सुरुचिर्हुतभुग्विभुः ।
रविर्विरोचनः सूर्यःसविता रविलोचनः ॥ १४ ॥

(८७६) विहायसगतिः—जो सूर्य रूप से आकाश में भ्रमण करते हैं, (८७७) ज्योतिः—जो ज्योतिस्वरूप हैं, (८७८) सुरुचिः—जो श्रेष्ठ रुचि वाले हैं, (८७९) हुतभुक्—जो आहुतियों का उपयोग करते हैं, (८८०) बिभुः—जो सर्वव्याप्त है, (८८१) रविः—जो सूर्य रूप हैं, (८८२) विरोचनः—जो विभिन्न प्रकारों से सुशोभित हैं । (८८३) सूर्यः—जो सूर्य रूप हैं, (८८४) सविता—जो जगत् को उत्पन्न करने वाले हैं, (८८५) रवि लोचनः—सूर्य जिनका नेत्र है ॥१४॥

अनन्तो हुतभुग्भोक्ता सुखदो नैकजोऽग्रजः ।
अनिर्विण्णः सदामर्षी लोकाधिष्ठानमद्भुतः ॥ १५ ॥

(८८६) अनन्तः—जिनका अन्त नहीं है, (८८७) हुतभुक्—जो हवि के भोक्ता हैं, (८८८) भोक्ता-जो सबका भोग करते हैं, (८८९) सुखदः जो सुखदायक हैं, (८९०) नैकजः—जो बारम्बार अवतार लेते हैं, (८९१) अग्रजः—जो सबसे पहले उत्पन्न हुए हैं, (८९२) अनिर्विण्णः—जो सब कामनाओं से पूर्ण हैं, (८९३) सदामर्षी—जो सदैव क्षमाशील हैं, (८९४) लोकाधिष्ठानम्—जो तीनों लोकों के अधिष्ठान (आश्रय) हैं, (८९५) अद्भुतः—जो अद्भुत हैं ॥९५॥

सनात्सनातनतमः कपिलः कपिरव्ययः ।
स्वस्तिदः स्वस्तिकृत्स्वस्ति स्वस्तिभुक् स्वस्तिदक्षिणः ॥ ९६ ॥

(८९६) सनात्—जो चिरकालीन हैं, (८९७) सनातनतमः—जो सनातनों से भी सनातन हैं, (८९८) कपिलः—जो कपिल वर्ण हैं, (८९९) कपिः—जो सूर्य तथा वाराह रूपी कपि हैं, (९००) अव्ययः—जो विकार को प्राप्त नहीं होते, (९०१) स्वस्तिदः—जो मंगलदायक हैं, (९०२) स्वस्तिकृत्—जो कल्याणकारी हैं, (९०३) स्वस्ति—जो कल्याण स्वरूप हैं, (९०४) स्वतिभुक्—जो कल्याण का उपभोग करने वाले हैं, (९०५) स्वस्तिदक्षिणः—जो कल्याण की अभिवृद्धि करने वाले हैं ॥९६॥

अरौद्रः कुण्डली चक्री विक्रम्यूर्जितशासनः ।
शब्दातिगः शब्दसहः शिशिरः शर्वरीकरः ॥ ९७ ॥

(९०६) अरौद्रः—जो रौद्र नहीं हैं, (९०७) कुण्डली—जो कुण्डलों को धारण किए हैं, (९०८) चक्री—जो चक्र धारण किए हैं, (९०९) विक्रमी—जो पराक्रमी हैं, (९१०) ऊर्जित शासनः—जिन्होंने

शासन को अर्जित किया है, (६११) शब्दातिगः—जिनका शब्दों में वर्णन नहीं हो सकता, (६१२) शब्द सहः—जो शब्दों को सहन करते हैं, (६१३) शिशिरः—जो शिशिर ऋतु रूप हैं, (६१४) शर्वरीकरः—जो चन्द्रिका छिटकाने वाले हैं ॥६७॥

अक्रूरः पेशलो दक्षो दक्षिणः क्षमिणांवरः ।
विद्वत्तमो वीतभयः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥ ९८ ॥

(६१५) अक्रूर—जो क्रूर नहीं हैं, (६१६) पेशलः—जो अत्यन्त सुन्दर हैं, (६१७) दक्षः—जो चतुर हैं, (६१८) दक्षिणः—जो अनुकूल रहते हैं, (६१९) क्षमिणांवरः—जो क्षमाशीलों में श्रेष्ठ हैं, (६२०) विद्वत्तमः—जो बड़े विद्वान् हैं, (६२१) वीतभयः—जिन्हें भय नहीं है, (६२२) पुण्य श्रवण कीर्तनः—जिनका नाम-श्रवण-कीर्तन पुण्यप्रद है ॥९८॥

उत्तारणो दुष्कृतिहा पुण्यो दुःस्वप्ननाशनः ।
वीरहा रक्षणः सन्तो जीवनः पर्यवस्थितः ॥ ९९ ॥

(६२३) उत्तारणः—जो संसार-सागर से पार उतारते हैं, (६२४) दुष्कृतिहा—जो दुष्कृतियों का हनन करते हैं, (६२५) पुण्यः—जो पुण्य स्वरूप हैं, (६२६) दुःस्वप्न नाशन—जो दुःस्वप्नों को नष्ट करने वाले हैं, (६२७) वीरहा—जो दुष्ट वीरों को मारने वाले हैं, (६२८) रक्षणः—जो रक्षा करने वाले हैं, (६२९) सन्तः—जो सन्मार्ग पर चलने वाले हैं, (६३०) जीवनः—जो सबके जीवन हैं, (६३१) पर्यवस्थितः—जो सबको स्वयं में व्याप्त करके स्थित हैं ॥९९॥

अनन्तरूपोऽनन्तश्रीर्जितमन्युर्भयापहः ।
चतुरस्रो गभीरात्मा विदिशो व्यादिशो दिशः ॥१००॥

(९३२) अनन्तरूपः—जो अनन्त रूपों वाले हैं, (९३३) अनन्तश्रीः—जो अपरिमित श्री (पराशक्ति) वाले हैं. (९३४) जितमन्युः—जिन्होंने क्रोध को जीत लिया है, (९३५) भयाबहः—जो भय दूर करने वाले हैं, (९३६) चतुरस्रः—जो चारों फलों को देने वाले हैं, (९३७) गभीरात्मा—जो गंभीर स्वभाव के हैं, (९३८) विदिशः—जो विविध प्रकार के फल देते हैं, (९३९) व्यादिशः—जो विविध प्रकार के आदेश देते हैं, (९४०) दिशः—जो कर्म-फल देने वाले हैं ॥१००॥

अनादिर्भूर्भुवो लक्ष्मीः सुवीरो रुचिराङ्गदः ।
जननी जनजन्मादिर्भीमो भीमपराक्रमः ॥१०१॥

(९४१) अनादिः—जिनका आदि नहीं है, (९४२) भूर्भुवः—जो समस्त भूतों तथा पृथ्वी के आधार हैं, (९४३) लक्ष्मीः—जो शोभा स्वरूप हैं, (९४४) सुवीरः—जो श्रेष्ठ वीर हैं, (९४५) रुचिरांगदः—जो सुन्दर बाजूबन्द पहने हैं, (९४६) जननः—जो सबके जन्मदाता हैं, (९४७) जन्म जन्मादिः—जो जन्म लेने वालों की उत्पत्ति के मूल कारण हैं, (९४८) भीमः—जो भयानक हैं, (९४९) भीम पराक्रमः—जो भयंकर पराक्रमी है ॥१०१॥

आधारनिलयो धाता पुष्पहासः प्रजागरः ।
ऊर्ध्वगः सत्पथाचारः प्राणदः प्रणवः पणः ॥१०२॥

(९५०) आधार निलयः—जो सबके आधार हैं, (९५१) धाता—जो सबको धारण करने वाले हैं, (९५२) पुष्पहासः—जो फूलों की हँसी हैं, (९५३) प्रजागरः—जो प्रकर्षरूप से जाग्रत् बने रहते हैं, (९५४) ऊर्ध्वगः—जो सबसे ऊपर रहते हैं, (९५५) सत्पथाचारः—जो सत्पथ का आचरण करते हैं, (९५६) प्राणदः—जो प्राण देने वाले हैं, (९५७) प्रणवः—जो ॐकार स्वरूप हैं, (९५८) पणः—जो पुण्य कर्मों का 'पण' (कर) रूप में संग्रह करते हैं ॥१०२॥

प्रमाणं प्राणनिलयः प्राणभृत्प्राणजीवनः ।
तत्त्वं तत्त्वविदेकात्मा जन्ममृत्युजरातिगः ॥१०३॥

(९५९) प्रमाणम्—जो प्रमाण रूप हैं, (९६०) प्राण निलयः—जो प्राणों के आश्रय स्थल हैं, (९६१) प्राणभृत्—जो प्राणों का पोषण करते हैं, (९६२) प्राण जीवनः—जो प्राणों को जीवित रखते हैं, (९६३) तत्त्वम्—जो तत्त्वरूप हैं, (९६४) तत्त्ववित्—जो तत्त्व को जानने वाले हैं, (९६५) एकात्मा—जो एकात्म स्वरूप हैं, (९६६) जन्म मृत्यु जरातिगः—जो जन्म, मृत्यु तथा जरा से परे हैं ॥१०३॥

भूर्भुवः स्वस्तरुस्तारः सविता प्रपितामहः ।
यज्ञो यज्ञपतिर्यज्वा यज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः ॥१०४॥

(९६७) भूर्भुवःस्वस्तरुः—भूः भुवः स्वः इन तीनों लोकों के ऊपर वृक्ष की भांति व्याप्त हैं, (९६८) तारः—जो संसार सागर से तारने वाले हैं, (९६९) सविता—जो सम्पूर्ण लोकों को उत्पन्न करते है, (९७०) प्रपितामहः—जो पितामह के भी पिता हैं, (९७१) यज्ञः—जो यज्ञ स्वरूप हैं; (९७२)

यज्ञपतिः—जो यज्ञ के स्वामी हैं, (९७३) यज्वा—जो यज्ञ करने वाले हैं, (९७४) यज्ञाङ्गः—जो यज्ञ के अङ्ग स्वरूप हैं, (९७५) यज्ञ वाहनः—जो यज्ञों को वहन करते हैं ।।१०४।।

यज्ञभृद्यज्ञकृद्यज्ञी यज्ञभुग्यज्ञसाधनः ।
यज्ञान्तकृद्यज्ञगुह्यमन्नमन्नाद एव च ।।१०५।।

(९७६) यज्ञभृत्—जो यज्ञ को धारण करते हैं, (९७७) यज्ञकृत्—जो यज्ञ करने वाले हैं, (९७८) यज्ञी—जो यज्ञ को पूर्णता देते हैं, (९७९) यज्ञभुग्—जो यज्ञ को भोगते हैं, (९८०) यज्ञ साधनः—जो यज्ञ के साधन हैं, (९८१) यज्ञान्तकृत्—जो यज्ञ का फल प्राप्त कराते हैं, (९८२) यज्ञ गुह्यम्—जो यज्ञों में गुप्तरूप से विद्यमान रहते हैं, (९८३) अन्नम्—जो अन्नरूप हैं, (९८४) अन्नाद—जो अन्न को खाने वाले हैं ।।१०५।।

आत्मयोनिः स्वयं जातो वैखानः सामगायनः ।
देवकीनन्दनः स्रष्टा क्षितीशः पापनाशनः ।।१०६।।

(९८५) आत्मयोनिः—जो आत्मा के उपादन कारण हैं, (९८६) स्वयंजातः—जो स्वयं उत्पना हुए हैं, (९८७) वैखानः—जिन्होंने विशेष रूप से पृथ्वी को खोदकर हिरण्याक्ष को मारा था, (९८८) सामगायनः—जो साम गान करते हैं, (९८९) देवकीनन्दनः—जो देवकी के पुत्र हैं, (९९०) स्रष्टा—जो सृजन करने वाले हैं, (९९१) क्षितीशः—जो पृथ्वी पति हैं, (९९२) पापनाशनः—जो पापों को नष्ट करते हैं ।।१०६।।

शंखभृन्नन्दकी चक्री शार्ङ्गधन्वा गदाधरः ।
रथाङ्गपाणिरक्षोभ्यः सर्वप्रहरणायुधः ॥१०७॥

सर्वप्रहरणायुधः ॐ नमः इति ।

(९९३) शंखभृत्—जो 'पांचजन्य' नामक शंख धारण करते हैं, (९९४) नन्दकी:—जो 'नन्दक' नामक खङ्ग धारण करते हैं, (९९५) चक्री—जो 'सुदर्शन' नामक चक्र धारण करते हैं, (९९६) शार्ङ्गधन्वा—जो 'शार्ङ्ग' नामक धनुष धारण करते हैं, (९९७) गदाधरः—जो 'कौमोदकी' नामक गदा धारण करते हैं, (९९८) रथांग पाणिः—जो रथ का पहिया धारण करते हैं, (९९९) अक्षोभ्यः—जिन्हें क्षुब्ध नहीं किया जा सकता, (१०००) सर्वप्रहरणायुधः—सभी प्रहरण (प्रहार करने वाले अस्त्र शस्त्र) जिनके आयुध हैं, ॐ नमः ॥१०७॥

॥ इति श्री विष्णु सहस्रनामम् ॥

———

फलश्रुतिः

अब विष्णु सहस्रनाम के फल के विषय में कहते हैं—

इतीदं कीर्तनीयस्य केशवस्य महात्मनः ।
नाम्नां सहस्रं दिव्यानामशेषेण प्रकीर्तितम् ॥१०८॥

'इतिइदं' कहकर भगवान् विष्णु के एक सहस्र दिव्यनामों का उल्लेख किया गया है, ये नाम भगवान् केशव के माहात्म्य का कीर्तन करने योग्य हैं ॥१०८॥

य इदं शृणुयान्नित्यं यश्चापि परिकीर्तयेत् ।
नाशुभं प्राप्नुयात्किञ्चित्सोऽमुत्रेह च मानवः ॥१०९॥

जो मनुष्य इन्हें नित्य सुनता है अथवा इनका पाठ करता है, उसका कभी अकल्याण नहीं होता, वह इस लोक तथा परलोक में सुख पाता है ॥१०९॥

वेदान्तगो ब्राह्मणः स्यात् क्षत्रियो विजयी भवेत् ।
वैश्यो धनसमृद्धः स्याच्छूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥११०॥

इसका पाठ करने वाला ब्राह्मण वेदान्त का ज्ञाता हो जाता है, क्षत्रिय विजयी बनता है, वैश्य धन से समृद्ध होता है तथा शूद्र सुख प्राप्त करता है ॥११०॥

धर्मार्थी प्राप्नुयाद्धर्ममर्थार्थी चार्थमाप्नुयात् ।
कामानवाप्नुयात्कामी प्रजार्थी प्राप्नुयात्प्रजाम् ॥१११॥

धर्मार्थी धर्म, अर्थार्थी अर्थ, कामार्थी काम तथा प्रजार्थी सन्तति प्राप्त करता है ॥१११॥

भक्तिमान् यः सदोत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।
सहस्रं वासुदेवस्य नाम्नामेतत् प्रकीर्तयेत् ॥११२॥

जो भक्तिमान् पुरुष सोकर उठने के बाद, शौचादि से पवित्र हो, भगवान् वासुदेव के इन सहस्र नामों का कीर्तन (पाठ) करता है ॥११२॥

यशः प्राप्नोति विपुलं ज्ञातिप्राधान्यमेव च ।
अचलां श्रियमाप्नोति श्रेयःप्राप्नोत्यनुत्तमम् ॥११३॥

वह विपुल यश प्राप्त करता है, अपनी जाति में प्रधान पद पाता है, निश्चल लक्ष्मी तथा अत्युत्तम कल्याण प्राप्त करता है ॥११३॥

न भयंक्वचिदाप्नोति वीर्यं तेजश्च विन्दति ।
भवत्यरोगो द्युतिमान्बलरूपगुणान्वितः ॥११४॥

उसे कहीं भय नहीं होता, वीर्य एवं तेज की वृद्धि होती है, नीरोग रहता है तथा कान्ति, बल रूप एवं गुणों से समृद्ध होता है ॥११४॥

रोगार्तो मुच्यते रोगाद्बद्धो मुच्येत बन्धनात् ।
भयान्मुच्येत भीतस्तु मुच्येतापन्न आपदः ॥११५॥

रोगी रोग से, बन्दी बन्धन से, भीत भय से तथा आपद्ग्रस्त विपत्ति से छूट जाता है ॥११५॥

दुर्गाण्यतितरत्याशु पुरुषः पुरुषोत्तमम् ।
स्तुवन्नामसहस्रेण नित्यं भक्तिसमन्वितः ॥११६॥

इस सहस्र नाम द्वारा पुरुषोत्तम भगवान् की भक्तिपूर्वक नित्य स्तुति करने वाला व्यक्ति दुःखों से पार हो जाता है ॥११६॥

वासुदेवाश्रयो मर्त्यो वासुदेवपरायणः ।
सर्वपापविशुद्धात्मा याति ब्रह्म सनातनम् ॥११७॥

भगवान् वासुदेव के आश्रित रहने वाला, वासुदेव परायण व्यक्ति सब पापों से छूट कर विशुद्धात्मा बन, सनातन ब्रह्म को प्राप्त होता है ॥११७॥

न वासुदेव भक्तानामशुभं विद्यते क्वचित् ।
जन्ममृत्युजराव्याधिभयंनैवोपजायते ॥११८॥

भगवान् वासुदेव के भक्त का कभी अकल्याण नहीं होता। उसे जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि, भय आदि भी नहीं होते ॥११८॥

इमं स्तवमधीयानः श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
युज्येतात्मा सुखक्षान्तिःश्रीधृतिस्मृतिकीर्तिभिः ॥११९॥

इस स्तोत्र का श्रद्धा-भक्ति पूर्वक पाठ करने वाला व्यक्ति सुख, शांति, श्री, धृति, स्मृति तथा कीर्ति प्राप्त करता है ॥११९॥

न क्रोधो न च मात्सर्यं न लोभोनाऽशुभामतिः ।
भवन्ति कृतपुण्यानां भक्तानां पुरुषोत्तमे ॥१२०॥

पुरुषोत्तम भगवान् के पुण्यात्मा भक्तों को क्रोध, मात्सर्य, लोभ एवं अशुद्ध बुद्धि की प्राप्ति नहीं होती ॥१२०॥

द्यौः सचन्द्रार्कनक्षत्रा खं दिशो भूर्महोदधिः ।
वासुदेवस्य वीर्येण विधृतानि महात्मनः ॥१२१॥

आकाश, चन्द्र, सूर्य, नक्षत्र, दिशाएँ, पृथ्वी और समुद्र—ये सभी महात्मा वासुदेव के वीर्य (शक्ति) द्वारा ही धारण किए हुए हैं ॥१२१॥

ससुरासुरगन्धर्वं सयक्षोरगराक्षसम् ।
जगद्वशे वर्त्ततेऽदं कृष्णस्य सचराऽचरम् ॥१२२॥

सुर, असुर, गन्धर्व, यक्ष, उरंग, राक्षसों सहित यह समस्त सचराचर जगत् श्रीकृष्ण के ही वश में रहता है ॥१२२॥

इन्द्रियाणि मनोबुद्धिः सत्त्वं तेजो बलं धृतिः ।
वासुदेवात्मकान्याहु क्षेत्रं क्षेत्रज्ञ एव च ॥१२३॥

इन्द्रियां, मन, बुद्धि, सत्व, तेज, बल, धृति क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ—ये सब वासुदेव के ही स्वरूप कहे गए हैं ॥१२३॥

सर्वागमनमाचारःप्रथमं परिकल्पते ।
आचारप्रभवो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्युतः ॥१२४॥

सभी शास्त्रों में सर्व प्रथम आचार की ही कल्पना की गई है । आचार से धर्म तथा धर्म से अच्युत भगवान् की प्राप्ति होती है ॥१२४॥

ऋषयः पितरो देवा महाभूतानि धातवः ।
जंगमाऽजंगमं चेदं जगन्नारायणोद्भवम् ॥१२५॥

ऋषि, पितर, देवता, महाभूत, धातुएँ तथा समस्त जड़-चेतन जगत् श्री नारायण से ही उत्पन्न हुआ है ॥१२५॥

योगो ज्ञानं तथा सांख्यं विद्याः शिल्पादिकर्म च ।
वेदाः शास्त्राणि विज्ञानमेतत्सर्वं जनार्दनात् ॥१२६॥

योग, ज्ञान, सांख्य, विद्या, शिल्पादि कर्म, वेद, शास्त्र, विज्ञान आदि सब कुछ श्रीजनार्दन से ही उत्पन्न हैं ॥१२६॥

एको विष्णुर्महद्भूतं पृथग्भूतान्यनेकशः ।
त्रींल्लोकान् व्याप्य भूतात्मा भुङ्क्ते विश्वभुगव्ययः ॥१२७॥

एकमात्र विष्णु ही महाभूत स्वरूप हैं, उनसे पृथक् कोई प्राणी नहीं है, वे भूतात्मा तीनों लोकों में व्याप्त हैं तथा विश्व का अनेक प्रकार से भोग करते हैं ॥१२७॥

इमं स्तवं भगवतो विष्णोर्व्यासेन कीर्तितम् ।
पठेद्य इच्छेत्पुरुषः श्रेयः प्राप्तुं सुखानि च ॥१२८॥

इस स्तोत्र को भगवान् विष्णु रूप व्यास ने कहा है । जो पुरुष कल्याण और सुख चाहता हो; उसे इसका पाठ करना चाहिए ॥१२८॥

विश्वेश्वरमजं देवं जगतः प्रभवाप्ययम् ।
भजन्ति ये पुष्कराक्षं न ते यान्ति पराभवम् ॥ १२१ ॥

विश्वेश्वर पुरुष अजन्मा हैं उन्होंने ही संसार को उत्पन्न किया है। उन पुष्कराक्ष का जो भजन करता है, उसका कभी पराभव नहीं होता ॥१२६॥

॥ अर्जुन उवाच ॥

पद्मपत्रविशालाक्ष पद्मनाभ सुरोत्तम ।
भक्तानामनुरक्तानां त्राता भवजनार्दन ॥ १३० ॥

अर्जुन ने कहा—"हे कमल पत्र के समान विशाल नेत्रों वाले पद्मनाभ देवश्रेष्ठ जनार्दन ! आप अपने भक्तों तथा अनुरक्तों की रक्षा कीजिए" ॥१३०॥

॥ श्रीभगवानुवाच ॥

यो मां नामसहस्रेण स्तोतुमिच्छसि पाण्डव ।
सोऽहमेकेन श्लोकेन स्तुत एव न संशयः ॥ १३१ ॥

श्री भगवान् बोले—"हे पाण्डव ! जो एकसहस्र नामों द्वारा मेरी स्तुति करने की इच्छा रखते हैं, मैं उनके एक श्लोक मात्र से ही निस्सन्देह प्रसन्न हो जाता हूँ" ॥१३१॥

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥ १३२ ॥

सहस्र मूर्ति, सहस्र पग, सहस्र नेत्र, सहस्र सिर, सहस्र बाहु, सहस्र नामों वाले तथा सहस्र कोटि युगों को धारण करने वाले अनन्त पुरुष को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१३२॥

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने ।
नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोऽस्तुते ॥ १३३ ॥

जिनकी नाभि में कमल स्थित है तथा जो जल (समुद्र) में शयन करते हैं, ऐसे केशव, अनन्त भगवान् वासुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१३३॥

वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम् ।
सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोस्तुते ॥ १३४ ॥

भगवान् वासुदेव की वासना से तीनों भुवन वासित हैं। सब भूतों में निवास करने वाले वासुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१३४॥

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ १३५ ॥

ब्रह्मण्यदेव, गो-ब्राह्मणों के हितू एवं जगत् के हितकारक, श्रीकृष्ण गोविन्द को मैं नमस्कार करता हूँ ।।१३५।।

आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् ।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति ॥ १३६ ॥

जिस प्रकार आकाश से गिरा हुआ वर्षा का जल पुनः सागर में चला जाता है, उसी प्रकार सब देवताओं के किए हुए नमस्कार भगवान् केशव की ओर ही जाते हैं ।।१३६।।

एष निष्कण्टकः पन्था यत्र सम्पूज्यते हरिः ।
कुपथं तं विजानीयात्गोविन्दरहितागमम् ॥ १३७ ॥

जहाँ हरि का पूजन हो, वही मार्ग निष्कण्टक है। जहाँ गोविन्द का पूजन न हो, उसे ही कुपंथ समझना चाहिए ।।१३७।।

सर्वदेवेषु यत्पुण्यं सर्वतीर्थेषु यत्फलम् ।
तत्फलं समवाप्नोति स्तुत्वा देवं जनार्दनम् ॥ १३८ ॥

सब देवताओं के पूजन का जो पुण्य है और सब तीर्थों के सेवन का जो फल है, वह सब केवल जनार्दन देव की स्तुति मात्र से ही प्राप्त हो जाता है ।।१३८।।

योनरः पठते नित्यं त्रिकालं केशवालये।
द्विकालमेककालं वा क्रूरं सर्वं व्यपोहति ॥ १३९ ॥

जो मनुष्य श्री विष्णु मन्दिर में बैठ कर तीनों समय, दोनों समय अथवा केवल एक ही समय इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसके सभी कष्ट नष्ट हो जाते हैं ॥१३९॥

दह्यन्ते रिपवस्तस्य सौम्याः सर्वेसदा ग्रहाः।
विलीयन्ते च पापानि स्तवे ह्यस्मिन् प्रकीर्तिते ॥ १४० ॥

जो इस स्तोत्र का पाठ करता है, उसके सब शत्रु भस्म हो जाते हैं, सभी ग्रह अनुकूल बनें रहते हैं तथा सभी पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१४०॥

येन ध्यातः श्रुतो येन येनाऽयं पठितः स्तवः।
दत्तानि सर्वदानानि सुराः सर्वे समर्चिताः ॥ १४१ ॥

जो इस स्तोत्र का ध्यान करता है, सुनता है एवं पाठ करता है, उसनें मानो सभी दान दे दिये तथा सभी देवताओं की अर्चना कर ली ॥१४१॥

इह लोके परे वापि न भयं विद्यते क्वचित्।
नाम्नां सहस्रं योऽधीते द्वादश्यां मम सन्निधौ ॥ १४२ ॥

जो व्यक्ति द्वादशी तिथि को मेरे सान्निध्य में इस विष्णु सहस्रनाम का पाठ करते हैं उन्हें इह-लोक तथा परलोक में कोई भय नहीं रहता ॥१४२॥

स निर्दहति पापानि कल्पकोटिशतानि च ।
अश्वत्थसन्निधौ पार्थ तुलसीसन्निधौ तथा ॥ १४३ ॥

हे पार्थ ! जो व्यक्ति पीपल अथवा तुलसी वृक्ष के समीप बैठ कर इस स्तोत्र का पाठ करता है; उसके सैकड़ों-करोड़ कल्पों के पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१४३॥

पठेन्नामसहस्रं तु गवां कोटिफलं लभेत् ।
शिवालये पठेन्नित्यं तुलसीवनसंस्थितः ॥ १४४ ॥

जो व्यक्ति देवालय में अथवा तुलसीवन में बैठकर इस सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करता है, वह करोड़ों गायों को दान करने का फल प्राप्त करता है ॥१४४॥

नरोमुक्तिमवाप्नोति चक्रपाणेर्वचो यथा ।
ब्रह्महत्यादिकं घोरं सर्वपापं विनश्यति ॥ १४५ ॥

चक्रपाणि श्री विष्णु के वचनानुसार इस स्तोत्र का पाठ करने वाला मनुष्य मुक्ति प्राप्त करता है तथा उसके ब्रह्महत्यादिक सभी घोर पाप नष्ट हो जाते हैं ॥१४५॥

इति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यामानुशासनिके पर्वणि दानधर्मोक्तभीष्मयुधिष्ठिरसंवादे–श्रीविष्णोर्दिव्य सहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।

॥ इति श्रीमन्हाभारते शत साहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यामानुशासनिके पर्वणि दानधर्मोक्त भीष्म-युधिष्ठिर सम्वादे पं० राजेश दीक्षित कृत भाषा-टीका सहितम् श्री विष्णोर्दिव्य सहस्रनाम स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

श्रीलक्ष्मीस्तोत्रम्

जय पद्मपलाशाक्षि जय त्वं श्रीपतिप्रिये । जय मातर्महालक्ष्मि संसारार्णवतारिणि ॥ १ ॥ महालक्ष्मि नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं सुरेश्वरि । हरिप्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं दयानिधे ॥ २ ॥ पद्मालये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं च सर्वदे । सर्वभूतहितार्थाय वसुसृष्टिं सदा कुरु ॥ ३ ॥ जगन्मातर्नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं दयानिधे । दयावति नमस्तुभ्यं विश्वेश्वरि नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥ नमः क्षीरार्णवसुते नमस्त्रैलोक्यधारिणि । वसुवृष्टे नमस्तुभ्यं रक्ष मां शरणागतम् ॥ ५ ॥ रक्ष त्वं देवदेवेशि देवदेवस्य वल्लभे । दारिद्र्यात्त्राहि मां लक्ष्मि कृपां कुरु ममोपरि ॥ ६ ॥ नमस्त्रैलोक्यजननि नमस्त्रैलोक्यपावनि । ब्रह्मादयो नमन्ते त्वां जगदानन्ददायिनि ॥ ७ ॥ विष्णुप्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं जगद्धिते । आर्तिहन्त्रि नमस्तुभ्यं समृद्धिं कुरु मे सदा ॥ ८ ॥ अब्जवासे नमस्तुभ्यं चपलायै नमोनमः । चञ्चलायै नमस्तुभ्यं ललितायै नमोनमः ॥ ९ ॥

नमोप्रद्युम्नजननि मतिस्तुभ्यं नमोनमः । परिपालय भो मातर्मां देवि शरणागतम् ॥ १० ॥ शरणयेत्वां प्रपन्नोऽस्मि कमले कमलालये । त्राहि-त्राहि महालक्ष्मि परित्राणपरायणा ॥ ११ ॥ पाण्डित्यं शोभते नैव न शोभन्ति गुणा नरे । शीलत्वं नव शोभेत महालक्ष्मि त्वया विना॥ । १२ ॥ तावद्विराजते रूपं तावच्छीलं विराजते । तावद् गुणा नराणां च यावल्लक्ष्मीः प्रसीदति ॥ १३ ॥ लक्ष्मि त्वयालंकृतमानवा ये पापैर्विमुक्ता नृपलोकमान्याः । गुणैर्विहीना गुणिनो भवन्ति दुःशीलिनः शीलवतां वरिष्ठाः ॥ १४ ॥ लक्ष्मीभूषयते रूपं लक्ष्मीभूंषयते कुलम् । लक्ष्मीभूंषयते विद्यां सर्वा लक्ष्मीर्विशिष्यते ॥ १५ ॥ लक्ष्मि त्वद्गुणकीर्तनेन कमला भूर्यात्यलं जिह्मतां रुद्राद्या रविचन्द्र देवपतयो वक्तुं च नैव क्षमाः। अस्माभिस्तव रूपलक्षणगुणान्वक्तुं कथं शक्यते मातर्मां परिपाहि विश्वजननि कृत्वा ममेष्टं ध्रुवम् ॥ १६ ॥ दीनार्तिभीतं भवतापपीडितं धनैर्विहीनं तव पार्श्वमागतम् । कृपानिधित्वान्मम लक्ष्मि सत्वरं धनप्रदानाद्धननायकं

कम् ॥ १७ ॥ मां विलोक्य जननी हरिप्रिये निर्धनं तव समीपमागतम् । देहि मे झटिति लक्ष्मि कराग्रं वस्त्राकाञ्चनवरान्नमद्भुतम् ॥ १८ ॥ त्वमेव जननी लक्ष्मि पिता लक्ष्मि त्वमेव च ॥ १९ ॥ त्राहि-त्राहि महालक्ष्मि त्राहि-त्राहि सुरेश्वरि । त्राहि-त्राहि जगन्मातर्दारिद्र्यात्त्राहि वेगतः ॥ २० ॥ नमस्तुभ्यं जगद्धात्रि नमस्तुभ्यं नमो नमः । धर्माधारे नमस्तुभ्यं नमः सम्पत्तिदायिनि ॥ २१ ॥ दारिद्र्यार्णवमग्नोऽहं निमग्नोऽहं रसातले । मज्जन्तं मां करे धृत्वा सूद्धर त्वं रमे द्रुतम् ॥ २२ ॥ किं लक्ष्मि बहुनोक्तेन जल्पितेन पुनः पुनः । अन्यन्मे शरणं नास्ति सत्यं सत्यं हरिप्रिये ॥ २३ ॥ एतच्छ्रुत्वाऽगस्ति वाक्यं हृष्यमाणा हरिप्रिया । उवाच मधुरां वाणीं तुष्टाऽहं तव सर्वदा ॥ २४ ॥ लक्ष्मीरुवाच—यत्त्वयोक्तमिदं स्तोत्रं यः पठिष्यति मानवः । शृणोति च महाभागस्तस्याहं वशवर्तिनी ॥ २५ ॥ नित्यं पठति यो भक्त्या त्वलक्ष्मीस्तस्य नश्यति । ऋणश्च नश्यते तीव्रं वियोगं नैव पश्यति ॥ २६ ॥ यः पठेत्प्रात-

रुत्थायश्रद्धाभक्ति समन्वितः । गृहे तस्य सदा स्थास्ये नित्यं श्रीपतिना सह ॥ २७ ॥ सुखसौभाग्यसम्पन्नो मनस्वी बुद्धिमान्भवेत् । पुत्रवान् गुणवान् श्रेष्ठो भोगभोक्ता च मानवः ॥ २८ ॥ इदं स्तोत्रं महापुण्यं लक्ष्म्यगस्ति-प्रकीर्तितम् । विष्णुप्रसादजननं चतुर्वर्गफल प्रदम् ॥ २९ ॥ राजद्वारे जयश्चैव शत्रोश्चैव पराजयः । भूतप्रेतपिशाचानां व्याघ्राणां न भयं तथा ॥ ३० ॥ न शस्त्रानल तोयौघाद्भयं तस्य प्रजायते । दुर्वृत्तानां च पापानां बहुहानिकरं परम् ॥ ३१ ॥ मन्दुराकरिशालासु गवां गोष्ठेसमाहितः । पठेत्तद्दोषशान्त्यर्थं महा-पातकनाशनम् ॥ ३२ ॥ सर्वसौख्यकरं नृणामायुरारोग्यदं तथा । अगस्तिमुनिना प्रोक्तं प्रजानां हितकाम्यया ॥ ३३ ॥

॥ आरती श्री लक्ष्मी जी की (१) ॥

जय लक्ष्मी माता, जय लक्ष्मी माता । तुमकू निशदिन सेवत हर विष्णु धाता ।
उमा रमा ब्रह्माणी तुमही जग माता । सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता ॥जय०॥१॥
दुर्गा रूप निरंजन सुख सम्पति दाता । जो कोई तुमको ध्यावत ऋद्धि सिद्धि धन पाता ॥२॥
तूही है पाताल बसन्ती तूही शुभदाता । कर्म प्रभाव प्रकाशक भवनिधि की त्राता ॥३॥
जिस घर थारो वासो तेहि में गुण आता । कर न सके सोई करले मन नहीं धड़काता ॥४॥
तुम बिन यज्ञ न होवे वस्त्र न होय राता । खान पान को वैभव तुम बिन को दाता ॥५॥
शुभ गुण सुन्दर मंदिर क्षीरनिधि जाता । रत्न चतुर्दश ताको कोई नहिं पाता ॥६॥
यह आरति लक्ष्मीजी की जो कोई नर गाता । उर आनन्द समाता पाप उतर जाता ॥७॥
जहां चरण तब पहुंचे नर शुभ हो जाता । राम प्रताप माता की शुभ दृष्टि चाहता ॥८॥

जय लक्ष्मी माता !

॥ श्री लक्ष्मी जी की आरती (२) ॥

जय लक्ष्मी माता जय लक्ष्मी माता, आदिशक्ति कहि तुमको सुरगण है ध्याता ।
जय कमलाल वालिनी हरि प्रिये कमले, काली गिरा समेते जल लक्ष्मी विमले ।
इन्द्राणी रुद्राणी ब्रह्माणी तुम ही, सकल लोक की माता पालन हेतु मही ।
जिस घर वास तुम्हारा उसका क्या कहना, रम्य भवन हैं उनके होवे अति गहना ।
महानिशा में घर-घर पूजा हो तेरी, जय कमले हरि भामिनि अब सुध ले मेरी ।
निज पति पुत्र समेता बसियो मम घर में, यही प्रार्थना मेरी स्वीकारो उर में ।
पूत कपूत भलेहि हो लेकिन नहिं माता, यही सोच अब मुझ पर करुणा कर माता ।
नहीं पाठ पूजा मैं जानूँ महतारी, केवल चरणों का ही हूँ आश्रयकारी ।
भक्ति भाव को अम्बे ज्ञान नहीं मुझको, 'धरणीधर' की अम्बे लज्जा है तुझको ।

॥ आरती जय जगदीश हरे ॥

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे । भक्त जनों के संकट क्षण में दूर करे ॥ॐ
जो ध्यावे फल पावे, दुःख विनशे मन का । सुख सम्पत्ति घर आवे कष्ट मिटे तन का ॥ॐ
मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी । तुम बिन और न दूजा आस करूँ जिसकी ॥ॐ
तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तर्यामी । पारब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी ॥ॐ
तुम करुणा के सागर तुम पालनकर्ता । मैं मूरख खल कामी कृपा करो भर्ता ॥ॐ
तुम हो एक अगोचर सबके प्राणपति । किस विधि मिलूँ दयामय, तुमको मैं कुमति ॥ॐ
दीनबन्धु दुःखहर्ता तुम रक्षक मेरे । करुणा हस्त बढ़ाओ, द्वार पड़ा तेरे ॥ॐ
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा । श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, संतन की सेवा ॥ॐ
